कर्मदहन विधान

रचयिता
दिगम्बराचार्य श्री 108 सौरभसागर जी महाराज

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमोगणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलम्।।
श्री धरसेनाचार्य देव पुष्पदन्त एवं भूतबलि मुनिवरों
को षट्खण्डागम का उपदेश देते हुए।

कर्मदहन विधान

रचयिता

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

कृति	:	**कर्म दहन विधान**
शुभाशीष	:	**पुष्पगिरि प्रणेता परम पूज्य** **गणाचार्य श्री 108ह पुष्पदंतसागर जी महाराज**
कृतिकार	:	**प.पू. दिगम्बराचार्य श्री 108 सौरभसागर जी महाराज**
संस्करण	:	द्वितीय जनवरी 2026 (1000 प्रतियाँ)
प्रकाशक	:	सौरभांचल प्रकाशन (क्र. 120)
प्राप्ति स्थल	:	1. **श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र,** पुष्पगिरि, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.) फोन : 07270-22870 2. **श्री दिगम्बर जैन तीर्थ सौरभाँचल,** श्री श्रुत स्कन्ध मन्दिर जी.टी. करनाल रोड, गन्नौर (हरियाणा) 3. **श्री दिगम्बर जैन मंशापूर्ण महावीर क्षेत्र** **जीवन आशा हॉस्पिटल** कावड़ मार्ग, गंगनहर, मुरादनगर (गाजियाबाद)
पुण्यार्जक	:	**अनिल जैन - शशि जैन** **पारणा जैन, आस्तिक जैन,** **आशिका जैन, सोहम जैन** **108, स्वास्तिक अपार्टमेन्ट, रोहिणी, दिल्ली**
मूल्य	:	रु. 60/- (पुनः प्रकाशन हेतु)
मुद्रक	:	पारस प्रकाशन, दिल्ली मो.: 9811374961, 9811363613 kavijain1982@gmail.com

"मंगलं पुष्पदन्ताद्यो" एक ऐतिहासिक सत्य

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैनधर्मोस्तु मंगलम्।।

जैन धर्म में देव शास्त्र गुरु के प्रति श्रद्धा ही सम्यग्दर्शन में कारण है। चौबीस तीर्थंकर एवं 1452 गणधर तथा द्वादशांगमय श्रुतज्ञान होने के उपरांत भी वर्तमान काल में तीर्थंकर महावीर स्वामी का शासन काल होने के कारण मंगल स्वरूप वे ही हैं इसलिए **"मंगलं भगवान् वीरो"** कहकर **"दीपावली पर्व"** को महत्व दिया जाता है तथा उनके प्रथम गणधर गौतम स्वामी की दीक्षा की स्मृति को **"मंगलं गौतमो गणी"** कहकर **"गुरु पूर्णिमा"** के रूप में महत्व दिया जाता है तथा 633 वर्ष बीतने के उपरांत श्रुत विच्छेद न हो जाये इसलिए मंत्र ज्ञाता धरसेनाचार्य ने अपना अंग श्रुतज्ञान आचार्य पुष्पदंत स्वामी को समर्पित किया और कहा भी है–

जयउ धरसेण णाहो जेण महाकम्म पयडि पाहुड सेलो।
बुद्धि सिरेणुद्धरियो समप्पियो पुप्फदंतस्स।।
(ध.पु.भा.-2)

अर्थात् वे धरसेन स्वामी जयवंत हों, जिन्होंने **महाकर्मप्रकृति** प्राभृत रूपी पर्वत को अपनी बुद्धिरूपी मस्तक पर धारण करके **आचार्य पुष्पदंत** को समर्पित किया।

उनसे शिक्षित शिष्य **आचार्य पुष्पदंत** ने **सर्वप्रथम णमोकार मंत्र** को निवद्ध मंगल कर षट्खण्डागम ग्रन्थ लिखना प्रारंभ किया एवं गणधर वलय मंत्र के साथ स्वामी भूतबलि आचार्य ने ग्रन्थ पूर्ण किया। इस उपलक्ष्य में **"श्रुतपंचमी"** पर्व मनाया जाता है यही ऐतिहासिक सत्य है इसलिए शुद्ध ग्रन्थ के प्रथम लेखक के रूप में **ऋषि सभा के अधिपति आचार्य पुष्पदंत स्वामी** का स्मरण करते हुए **"मंगलं पुष्पदन्ताद्यो"** कहा जाता है।

ये तीनों ही जैनधर्म के उत्कृष्ट मंगल स्वरूप हैं। इसलिए धवलाकार वीरसेन स्वामी ने कहा–

"तदो मूलतंत कत्ता वद्ढ्ढमाण भडारयो, अणुतंत कत्ता गौदम स्वामी उवतंत कत्तारा भूदबली पुप्फदंताद्यो वीयराय दोष मोहा मुणिवरा"
(ध.पु.भा.-1, पृ:73)

अर्थात् मूलग्रंथ कर्ता वर्द्धमान भट्टारक अणुतंत कर्ता गौतम स्वामी, उपतंत ग्रंथ कर्ता भूतबलि पुष्पदंतादि, वीतराग दोष मोह रहित मुनिवर हैं।

इसे ही शुद्ध दिगम्बर आगम प्रमाणानुसार निम्न श्लोक के रूप में कहा जाता है–

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैनधर्मोस्तु मंगलम्।।

वृहत् शान्तिधारा पाठ

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थंकराय श्रीमद्-रत्नत्रयरूपाय दिव्यतेजोमूर्त्तये प्रभामण्डलमण्डिताय द्वादशगणसहिताय, अनन्तचतुष्टयसहिताय, समवसरण-केवलज्ञान-लक्ष्मीशोभिताय, अष्टादश-दोषरहिताय, षट्-चत्वारिंशद्-गुणसंयुक्ताय, परमेष्ठि-पवित्राय, सम्यग्ज्ञानाय स्वयम्भुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्यमहिताय, अनंत-संसार- चक्रप्रमर्दनाय अनन्तज्ञान-दर्शन-वीर्य-सुखास्पदाय त्रैलोक्यवशंकराय, सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे उपसर्गविनाशनाय घातिकर्मक्षयंकराय अजराय अभवाय अस्माकं (अमुक राशिनामधेयानां) व्याधिं घ्नन्तु। श्री जिनाभिषेकपूजन प्रसादात् अस्माकं सेवकानां सर्वदोष, रोग, शोक, भय, पीड़ा, विनाशनं भवतु।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेष, दोष, कल्मषाय, दिव्य-तेजोमूर्तये श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्न, प्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय सर्वपरकृत-क्षुद्रोपद्रव-विनाशनाय सर्वारिष्ट, शान्ति, कराय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः मम सर्वविघ्न-शान्तिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं कुरु-कुरु स्वाहा।

मम कामं शान्तिं-शान्तिं। रतिकामं शान्तिं-शान्तिं। बलिकामं शान्तिं-शान्तिं। क्रोधं-पापं-वैरं च शान्तिं-शान्तिं। अग्निवायुभ्यं शान्तिं-शान्तिं। सर्वशत्रु-विघ्नं शान्तिं-शान्तिं। सर्वोपसर्गं शान्तिं-शान्तिं। सर्वविघ्नं शान्तिं-शान्तिं। सर्वराज्य दुष्टभयं शान्तिं-शान्तिं। सर्वचौर दुष्टभयं शान्तिं-शान्तिं। सर्व-सर्प-वृश्चिक-सिंहादिभयं शान्तिं-शान्तिं। सर्वग्रहभयं शान्तिं-शान्तिं। सर्वदोषं व्याधिं डामरं च शान्तिं-शान्तिं। सर्वपरमंत्रं शान्तिं-शान्तिं। सर्वात्मघातं परघातं च शान्तिं-शान्तिं। सर्वशूल कुक्षि अक्षि शिरो ज्वररोगं शान्तिं-शान्तिं। सर्वनरमारिं शान्तिं-शान्तिं। सर्वगजाश्व गौ-महिष-अजमारिं शान्तिं-शान्तिं। सर्वसस्य-धान्य-वृक्ष-लता-गुल्म-पत्र-पुष्प-फलमारिं शान्तिं-शान्तिं। सर्वराष्ट्रमारिं शान्तिं-शान्तिं। सर्वक्रूर-वेताल डाकिनी-भयानि शान्तिं-शान्तिं। सर्वापस्मारिं शान्तिं-शान्तिं। अस्माकं सर्व अशुभकर्म-जनित-दुःखानि शान्तिं-शान्तिं। दुष्टजनकृतान्-मंत्र-तंत्र-दृष्टि-मुष्टि-छल-छिद्रदोषान् शान्तिं-शान्तिं। सर्वदुष्ट-देव-दानव-वीर-नर-नाहर-सिंह-योगिनी-कृत-दोषान् शान्तिं-शान्तिं। सर्व-अष्टकुली-नागजनित-विषभयानि शान्तिं-शान्तिं। सर्वस्थावर जंगम वृश्चिक सर्पादिकृत-दोषान् शान्तिं-शान्तिं। सर्वसिंहाष्टा-पदादि कृतदोषान शान्तिं-शान्तिं।

परशत्रुकृत-मारणोच्चाटन-विद्वेषण-मोहन-वशीकरणादि कृतदोषान् शान्तिं-शान्तिं। सर्व कर्माष्टकं शान्तिं-शान्तिं। ॐ ह्रीं अस्मभ्यं चक्र-विक्रम-सत्त्व-तेजो-बल-शौर्य-वीर्य-शान्तीः पूरय पूरय। सर्वजीवानंदनं कुरु कुरु जनानंदनं कुरु कुरु भव्यानंदनं कुरु कुरु सर्व गोकुलानंदनं कुरु कुरु। सर्वराजानंदनं कुरु कुरु। सर्वग्राम-नगर-खेट-कर्वट-मटंब-पतन-द्रोणमुख-संवाहनानंदनं कुरु कुरु। सर्वानंदनं कुरु कुरु स्वाहा।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधि-व्यसन-वर्जितम्।
अभयं क्षेममारोग्यं, स्वस्तिरस्तु विधीयते।।

श्रीशान्तिरस्तु। शिवमस्तु। जयोस्तु। नित्यमारोग्यमस्तु। सर्व जीव कल्याण मस्तु। शुभ अस्तु। सुकीर्ति रस्तु। सर्व रोग शोक पीड़ा विनाशनं भवतु। सम्यक दर्शन ज्ञान चारित्र वृद्धि रस्तु। अस्माकं तुष्टि। पुष्टि। समृद्धिरस्तु। सुखमस्तु। दीर्घायुरस्तु। कुलगोत्र धनानि सदा सन्तु। सद्धर्म श्रीबलायुरारोग्यै- श्वर्याभिवृद्धिरस्तु।

वृषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पद्म सुपार्श्व जिनराय।
चन्द्र पुहुप शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज पूजित सुरराय॥
विमल अनंत धरम जस उज्ज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु, वर्द्धमान पद शीश झुकायें॥

ॐ ह्रीं श्रीं *वृषभादि वीरान्तरेभ्यः शान्तये शान्तिधारा स्वाहा।*
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरहंताणं *इति* ह्रौं सर्व शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।
ॐ ह्रीं श्रीं मंशापूर्ण महावीर जिनेद्राय नमः रक्ष-रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा।
ॐ ह्रीं णमो भगवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जूए वा विवादे वा रणंगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा वर्धमान-मन्त्रेण सर्वरक्षा भवतु स्वाहा।
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र सामान्य तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः।।

अर्घ

उदक चंदन तंदुल पुष्पकैश्चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्यकैः।
धवल मंगल गान रवाकुले जिनगृहे अभिषेकमहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वर्धमानपर्यंत चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो महाशांतिधाराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विनय पाठ

इह विधि ठाडो होयके, प्रथम पढै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ॥1॥
अनंत चतुष्टय के धनी, तुमही हो सिरताज।
मुक्ति-वधू के कंत तुम, तीन भुवन के राज॥2॥
तिहुँ जग की पीड़ा-हरन, भवदधि शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार॥3॥
हरता अघ अंधियार के, करता धर्म प्रकाश।
थिरता पद दातार हो, धरता निजगुण रास॥4॥
धर्मामृत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप।
तुमरे चरण-सरोज को, नावत तिहुँ जग भूप॥5॥
मैं वंदौ जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव।
कर्मबंध के छेदने, और न कछू उपाय॥6॥
भविजन को भवकूप तैं, तुम ही काढ़नहार।
दीनदयाल अनाथपति, आतम गुण भंडार॥7॥
चिदानंद निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिवगैल॥8॥
तुम पदपंकज पूजतैं, विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरै, विष निरविषता थाय॥9॥
चक्री खगधर इंद्रपद, मिलै आपतैं आप।
अनुक्रम ते शिवपद लहैं, नेम सकल हनि आप॥10॥
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन॥11॥
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
अंजन से तारे प्रभु, जय जय जय जिनदेव॥12॥
थकी नाव भवदधिविषै, तुम प्रभु पार करेय।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव॥13॥
रागसहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेट्यो अबै, मेटो राग कुटेव॥14॥

कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यञ्च अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान॥15॥
तुमको पूजैं सुरपती, अहिपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव॥16॥
अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार।
मैं डूबत भवसिन्धु में, खेव लगाओ पार॥17॥
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारिकैं, कीजे आप समान॥18॥
तुमरी नेक सुदृष्टि तैं, जग उतरत है पार।
हा हा डूबो जात हो, नेक निहार निकार॥19॥
जो मैं कहहूँ औरसों, तो न मिटै उर भार।
मेरी तो तोसों बनी, तातैं करौं पुकार॥20॥
वन्दों पाँचों परम गुरु, सुरगुरु वन्दत जास।
विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश॥21॥
चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमगसाधक साधु नमि, रच्यो पाठसुखदाय॥22॥
मंगल मूर्ति परमपद, पंचधरो नित ध्यान।
हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान्॥23।
मंगल जिनवर पद नमों, मंगल अर्हंतदेव।
मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दौं स्वयमेव॥24।
मंगल आचारज मुनि मंगल गुरु उवझाय।
सर्व साधु मंगल करो, वन्दौं मन वच काय॥25॥
मंगल सरस्वती मात का, मंगल जिनवर धर्म।
मंगल मय मंगल करो, हरो असाता कर्म॥26॥
या विधि मंगल से सदा, जग में मंगल होत।
मंगल 'नाथूराम' यह भवसागर दृढ़ पोत॥27॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत् (नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

मंगल कलश स्थापना

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं पुष्पदंताद्यो, जैनधर्मोस्तु मंगलम्।।
ॐ जय! जय!! जय!!! नमोऽस्तु! नमोऽस्तु!! नमोऽस्तु!!!
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।
ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः।
(पुष्पांजलिं क्षेपण करें)

1. **सर्वप्रथम शुद्ध जल से स्वयं को एवं हाथों को शुद्ध करें–**
   ॐ ह्रीं असुजर सुजर भव स्वाहा।
2. **तत्पश्चात् जल से भूमि शुद्धि करें–**
   ॐ ह्रीं भूः शुद्धयतु स्वाहा।
3. **सकलीकरण करें–**
   ॐ ह्रां णमों अरिहंताणं मम शीर्ष रक्ष-रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।
   ॐ ह्रीं णमों सिद्धाणं मम मस्तक रक्ष-रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।
   ॐ ह्रूं णमों आयरियाणं मम हृदय रक्ष-रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।
   ॐ ह्रौं णमों उवज्झायाणं मम नाभि रक्ष-रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।
   ॐ ह्रः णमों लोए सव्वसाहूणं मम पादौ रक्ष-रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।
   ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष-रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।
4. **अक्षत् चावल लेकर जमीन पर (जहाँ पर कलश स्थापित करना हो वहाँ) स्वास्तिक बनावें।**
   ॐ ह्रीं परम ब्रह्मणे नमो नमः स्वास्ति-2 जीव-2 नन्द-2 वर्द्धस्य-2 विजयस्व-2 अनुशाधि-2, पुनीहि-2 पुण्याहं-2 मांगल्यं मांगल्यं पुष्पाञ्जलि। **(पुष्प क्षेपण करें)**
5. ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः नमो अर्हते श्रीमते पवित्रतर जलेन मंगल कलशं स्थापितं करोमि स्वाहा। **(यह मंत्र पढ़कर कलश स्थापित करें।)**
   अपनी जाति, गौत्र, दादा, पिताजी, माताजी, स्वयं, पत्नी, बच्चों का नाम तथा सम्वत्, माह, पक्ष, तिथि, वार, बोलकर कलश स्थापित करें कलश में 5 हल्दी, 5 सुपाड़ी, पीली सरसों, सबा रुपया, धनिया आदि मांगलिक वस्तुएं डाले।
6. ॐ ह्रीं आँ क्रौं अत्र स्थाने विराजित क्षेत्रपाल देवाय आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः ठः स्थापना इदं अर्घं समर्पयामि। **(नैवेद्य पुष्प आदि अर्घ चढ़ायें)**
7. ॐ ह्रीं आँ क्रौं अत्र स्थाने विराजित सर्व वास्तु देवा आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः ठः स्थापना इदं अर्घं समर्पयामि। **(अर्घं समर्पण करें)**

8. ॐ ह्रीं आँ क्रौं वायु कुमार देवाय अत्र स्थाने वायु शुद्धि कुरू-कुरू ह्रूँ फट् स्वाहा। **(हाथों से हवा करें अर्घ समर्पयामि)**
9. ॐ ह्रीं आँ क्रौं मेघ कुमार देवाय अत्र स्थाने भूमिं शुद्धि कुरू-कुरू अँ हँ सँ वँ क्षँ ठँ क्षः फट् स्वाहा **(अर्घं समर्पयामि)**
10. ॐ ह्रीं आँ क्रौं अग्नि कुमार देवाय भूमि ज्वलय-2 फट् स्वाहा। **(कपूर जलावें) (अर्घं समर्पयामि)**
11. ॐ ह्रीं आँ क्रौं षष्टिसहस्त्र संख्येभ्यो नागकुमार देवाय जलात्रजलि स्वाहा। **(जलं अर्घं समर्पयामि)**
12. ॐ ह्रीं आँ क्रौं इन्द्र, आग्ने, यम, नैऋत्य, वरूण, पवन, कुबेर, ईशान, सोम, घरणेन्द्र दिग्पाल देवाय आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः स्वाहा। **(अर्घं समर्पयामि)**
13. ॐ ह्रीं आँ क्रौं पंचदश तिथि देवता आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः स्वाहा। **(अर्घं समर्पयामि)**
14. ॐ ह्रीं आँ क्रौं आदित्य चन्द्र-मंगल बुध-गुरू शुक्र-शनि राहु-केतु नवग्रह देवाय आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः स्वाहा। **(अर्घं समर्पयामि)**
15. ॐ ह्रीं नमोऽर्हदभ्यो पंच परमेष्ठिभ्यो: नमः। **(अर्घं)**
16. ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरान्त चतुर्वीस तीर्थंकरेभ्यो: नमः। **(अर्घं)**
17. ॐ ह्रीं वृषभसेनादि गौतमान्त गणधरेभ्यो: नमः। **(अर्घं)**
18. ॐ ह्रीं मम कुल गुरूवे नमः। **(अर्घं समर्पयामि)**
19. ॐ ह्रीं आँ क्रौं गौमुखादि चतुर्विंशति यक्षादि देवाय अर्घं समर्पयामि।
20. ॐ ह्रीं आँ क्रौं चक्रेश्वरी ज्वालामालिनी पद्मावति आदि चतुर्विंशति यक्षी देवाय नमः। **(अर्घं समर्पयामि)**
21. ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं धृति कीर्ति बुद्धि शान्ति पुष्टि लक्ष्मी देवीभ्यो नमः। **(अर्घं समर्पयामि)**
22. मम कुल गृह देवो जिनेश्वरो तीर्थंकरो गधधर गुरूओं, मम गुरू भक्ति प्रसादात् प्रसन्नो भवतु मम कुल (जाति) गोत्र का नाम स्मरण करें मम् धन धान्य पुत्र पौत्रादिक सौख्यं शांतिं पुष्टिं आरोग्यं अक्षीणं भवत् स्वाहा।
23. **बीजाक्षर मंत्रों से सज्जित, मंगल कलश महान है।**
शुभ संकल्पों का दाता यह, कल्प वृक्ष समान है।।
हो विधान पूजा शुभ कारज, कलश क्लेश सब दूर करें।
अर्घावली मंत्रों को अर्पित, सुख शांति भरपूर करें।।
ॐ ह्रीं श्री क्लीं ऐं बीजाक्षर युक्त कलश यन्त्राय नमः अर्घम् निर्वापामीति स्वाहा।
24. कलश के सामने दीप धूप कर इष्ट देव की स्तुति करें। अर्घ चढ़ाकर पुनः क्षमा याचना कर विसर्जन करें।

अर्घ-मंशापूर्ण महावीर स्वामी

श्रद्धा का जल कर में लेकर भक्ति का चन्दन लाया
अक्षत कुसुम चरूवर पावन दीप धूप वन्दन भाया
सिद्ध शिला फल चाह लिये मैं अष्ट द्रव्य चढ़ाऊँगा
श्री मंशापूरण महावीर की पूजा कर सुख पाऊँगा

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ-गणाचार्य श्री पुष्पदंत सागर जी

अरमानों की थाली जोयी, नयनों में जल भर लाया।
सुनहिल भावों की केशर ले, शब्द पुष्प तन्दुल लाया।।
तन नैवेद्य बना मन दीपक, मद यौवन की धूप बना।
तव पद में अर्पित सिर फल, पूजन का यह अर्घ बना।

दोहा

तन मन धन अर्पण किया, रहा न कुछ भी शेष।
अष्ट द्रव्य से पूज कर, पाऊँ जिनका भेष।।

ॐ ह्रूं श्री 108 गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-जी-महाराज-अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपमीति स्वाहा।

अर्घ-आचार्य श्री सौरभ सागर जी

पिच्छी लेकर नग्न रहे, और केश लोंच जो करते हैं।
तन शृंगार रहित वह होकर, बाईस परिषह सहते हैं।।
स्व आत्म कल्याण करे, और पर को मार्ग बताते हैं।
सुलझाते हैं जो मन की ग्रंथियाँ सौरभ सागर जी कहलाते हैं।।

ॐ ह्रूं संस्कार-प्रणेता-आचार्यश्री 108 सौरभ-सागर-जी गुरुदेव-चरण कमलेभ्यो अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रारम्भ

ॐ जय! जय!! जय!!! नमोऽस्तु! नमोऽस्तु!! नमोऽस्तु!!!
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।
ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः।
(पुष्पांजलिं क्षेपण करें)

चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते सरणं पव्वज्जामि,
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि,
केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।
ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। (पुष्पांजलिं क्षेपण करें)

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पंच नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते।।1।।

अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यंतरे शुचिः।।2।।

अपराजित मंत्राऽयं, सर्व विघ्न विनाशनः।
मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः।।3।।

एसो पंच णमोयारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होई मंगलं।।4।।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म, वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम्।।5।।

कर्माष्टक विनिर्मुक्तं, मोक्ष लक्ष्मी निकेतनम्।
सम्यक्त्वादि गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम्।।6।।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी भूत पन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।।7।।
(पुष्पांजलिं क्षेपण करें)

पंचकल्याणक का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले, जिनगृहे कल्याणमहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भ-जन्म-तप-ज्ञान-निर्वाण-पंचकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचपरमेष्ठी का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले, जिनगृहे जिननाथमहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हंत सिद्धाचार्योपाध्याय, सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनसहस्रनाम का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले-जिनगृहे-जिननाममहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिन-अष्टाधिक-सहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले-जिनगृहे-जिननाममहं यजे॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वस्ति मंगल विधान

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वाद-नायकमनन्त-चतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्,
जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष-मयाऽभ्यधायि॥1॥
स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिन-पुंगवाय,
स्वस्ति स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय।

स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्जित-दृङ्मयाय,
स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्भुत-वैभवाय॥2॥
स्वस्त्युच्छलद्विमल-बोध-सुधा-प्लवाय।
स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोक विततैक चिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल सकलायत विस्तृताय॥3॥
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरुपं,
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगंतुकामः।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्,
भूतार्थ-यज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञम्॥4॥
अर्हन्पुराण-पुरुषोत्तम-पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव।
अस्मिन् ज्वलद्विमल-केवल-बोधवह्नौ,
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि॥5॥

ॐ ह्रीं विधियज्ञ प्रतिज्ञायै जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपामि।

चतुर्विंशति तीर्थंकर स्वस्ति विधान

श्री वृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अजितः।
श्री संभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अभिनन्दनः।
श्री सुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री पद्मप्रभः।
श्री सुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री चन्द्रप्रभः।
श्री पुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शीतलः।
श्री श्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्री वासुपूज्यः।
श्री विमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अनन्तः।
श्री धर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शान्तिः।
श्री कुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरनाथः।
श्री मल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः।
श्री नमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री नेमिनाथः।
श्री पार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वर्द्धमानः।

॥इति श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर-स्वस्ति-मंगलविधानं पुष्पांजलिं क्षिपामि॥

परमर्षि स्वस्ति मंगल विधान

नित्याप्रकम्पाद्भुत-केवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्यय शुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञान-बलप्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥1॥

कोष्ठस्थ-धान्योपममेकबीजं, संभिन्न संश्रोतृ पदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥2॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि।
दिव्यान् मतिज्ञान बलाद्वहन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥3॥

प्रज्ञा प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येकबुद्धाः दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांग-निमित्त-विज्ञाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥4॥

जंघा-नल-श्रेणि-फलाम्बु-तंतु, प्रसून-बीजांकुर-चारणाह्वाः।
नभोऽङ्गण स्वैरविहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥5॥

अणिम्नि दक्षाः कुशलाः महिम्नि, लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनो-वपूर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥6॥

सकामरूपित्व-वशित्वमैश्यं, प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥7॥

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोरगुणंचरन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥8॥

आमर्ष-सर्वौषधयस्तथाशी र्विषाविषा दृष्टि-विषा विषाश्च।
सखिल्ल-विड्जल्ल-मलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुःपरमर्षयो नः॥9॥

क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंतो मधु-स्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः।
अक्षीणसंवास महानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्शयो नः॥10॥

॥इति परमर्षि-स्वस्ति-मंगल-विधानं पुष्पांजलिं क्षिपामि॥

''देव-शास्त्र-गुरु-जिनतीर्थ-अकृत्रिम तीर्थ तीस चौबीसी विद्यमान 20 तीर्थंकर-निर्वाण भूमि'' की समुच्चय पूजन *

(जैनाचार्य श्री सौरभ सागर जी महाराज द्वारा रचित)

परम् देव अरिहंत सिद्ध गुरु, आचारज साधु उवज्झाय।
माँ जिनवाणी बीस जिनेश्वर, विद्यमान तीर्थंकर ध्याय।।
तीर्थंकर मुनि मोक्ष भूमि अरुँ, अकृत्रिम जिन वंदन है।
तीस चौबीसी तीर्थंकर का, आह्वाहन स्थापन है।।

ॐ ह्रीं अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु पंचपरमेष्ठी समूह-द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह-अकृत्रिम जिन बिम्ब समूह-तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह-अत्र अवतर अवतर-अत्र तिष्ठ-तिष्ठ अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

जल

जल जीवन रक्षित करता है, शांत स्वभावी सरल तरल।
चरणों में जल अर्पित करता, पाने को शुभ मोक्ष महल।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह-द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह-अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय **जलं** निर्वपामीति स्वाहा।

---

*कभी-कभी समय की अल्पता के कारण आराधना के तीव्र भाव उत्पन्न होते हैं उन सभी आराधना चाहने वालों के लिए आचार्यश्री ने महाउपकार करके एक साथ "पंच परमेष्ठी, माँ जिनवाणी, विद्यमान बीस तीर्थंकर, अढाई द्वीप, सम्पूर्ण निर्माण भूमि, अकृत्रिम जिनबिम्ब (प्रतिमा) एवं तीस चौबीसी" की समुच्चय पूजा की रचना की है।

चंदन

ताप विनाशक तन का चंदन, पूज्य चरण में लें आया।
क्रोध द्वेष प्रतिशोध त्यागकर, शीतल सुरभित गुण गाया।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह संसार ताप विनाशनाय **चंदनं** निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

सिद्ध शिला का वासी आतम, पापी बन भव घूम रहा।
त्रय योगों को स्थिर करके, द्रव्य चढ़ा मन झूम रहा।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह अक्षय पद प्राप्ताय **अक्षतं** निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

काम भोग का रोग भयंकर, मन बगियाँ में खिलता हैं।
वैरागी प्रभु के सम्मुख आ, काम भाव सब मिटता हैं।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह कामबाण विनाशनाय **पुष्पं** निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

पतितोद्धारक आप निराकुल, क्षुधारोग से पीड़ित हूँ।
धर्म ध्यान की औषध पाकर, भक्ति भाव से जीवित हूँ।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह क्षुधा रोग विनाशनाय **नैवेद्यं** निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

मिथ्या भाव का महा तिमिर प्रभु, काल अनादि से भीतर।
तव दर्शन की शुभ्र दीप से, ज्योतिर्मय आतम अंदर।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह मोहांधकार विनाशनाय **दीपं** निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

तव चरणों की धूपायन में, कर्म धूप खेनें आया।
धर्म गंध चारों दिश फैले, मन पूजा कर हर्षाया।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह अष्ट कर्म विनाशनाय **धूपं** निर्वपामीति स्वाहा।

फल

भक्ति भाव की दिव्य तरु में, चढ़कर रत्नत्रय पाऊँ।
जिन गुण फल आतम में प्रगटे, सिद्धालय में रम जाऊँ।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह मोक्षफल प्राप्ताय **फलं** निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

अष्ट द्रव्य का अर्घ थाल लें, श्रद्धा से अर्पित करता।
है अनर्घ पद पावन तेरा, पाने मन उलसित होता।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह अनर्घ्य पद प्राप्ताय **अर्घम्** निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

पंचपरम गुरु परमेष्ठी हैं, पूज्य पुरुष अरिहंत मुनि।
सिद्ध निरामय निराकार हैं, अष्ट कर्म के कष्ट हनि।।1।।

आचारज उवज्झाय साधुगण, ज्ञानध्यान तप लीनयति।
णमोकार नित जपकर करता, चरण वंदना जैनमति।।2।।

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पद्म सुपार्श्व प्रभो
चन्द्र पुष्प शीतल श्रेयांश पद, वासु विमलानन्त नमो।।3।।

धर्म शान्ति कुन्थु अरनाथा, मल्लि मुनिसुव्रत नमि जपूं।
नेमी पारस महावीर जी, वर्तमान चौबीसी भंजू।।4।।

तीर्थराज सम्मेद शिखर जी, अष्टापद पावा गिरनार।
चम्पापुर सह ढाई द्वीप की, मोक्ष भूमि बन्दूँ शतवार।।5।।

सीमंधर से अजितवीर्य तक, विद्यमान श्री बीस जिनेश।
क्षेत्र विदेह में देह रहित हो, हरते सारे कर्म क्लेश।।6।।

आठ कोटि अरुँ छप्पन लक्षा, सत्तावन हज्जार कहें।
चार शतक इक्यासी प्रतिमा, नमन उन्हें शतवार करें।।7।।

जिनप्रतिमा अकृत्रिम जग में, दिव्य रूप है वृहद विशाल।
ऊर्ध्व अधो अरुँ मध्य लोक के, जिन प्रतिमा बन्दूँ त्रयकाल।।8।।

ऐरावत और भरत क्षेत्र के, तीर्थंकर गुणगान करूँ।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीस चौबीसी ध्यान धरूँ।।9।।

प्रभु पूजन दर्शन वंदन से, निद्धत निकाचित कर्म कटें।
अनुपम आत्मिक अव्यय सुख का, सूरज निज आतम प्रगटे।।10।।

दिव्य ध्वनि की निर्मल वाणी, माँ जिनवाणी कहलाती।
दिव्य ज्ञान दे अन्तर्मन की, कल्मषता सब धो जाती।।11।।

परमेष्ठी जिनवाणी माता, क्षेत्र विदेह के बीस जिनेश।
सिद्ध भूमि अकृत्रिम प्रतिमा, तीस चौबीसी के तीर्थेश।।12।।

देव शास्त्र गुरु तीरथ भूमि, तीर्थंकर को सदा नमूँ।
अर्घावली चरणों में देकर, शुद्धातम को सदा भजूँ।।13।।

दोहा- कर्म रहित जिनदेव की, भक्ति करे कल्याण।
"सौरभसागर" नित नमें, पाने शाश्वत धाम।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह जयमालाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- परमेष्ठी श्रुत बीस जिन, तीस चौबीसी ध्याय।
अकृत्रिम जिनराज भज, सिद्ध भूमि सिर नाय।।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

कर्मदहन विधान

माण्डला

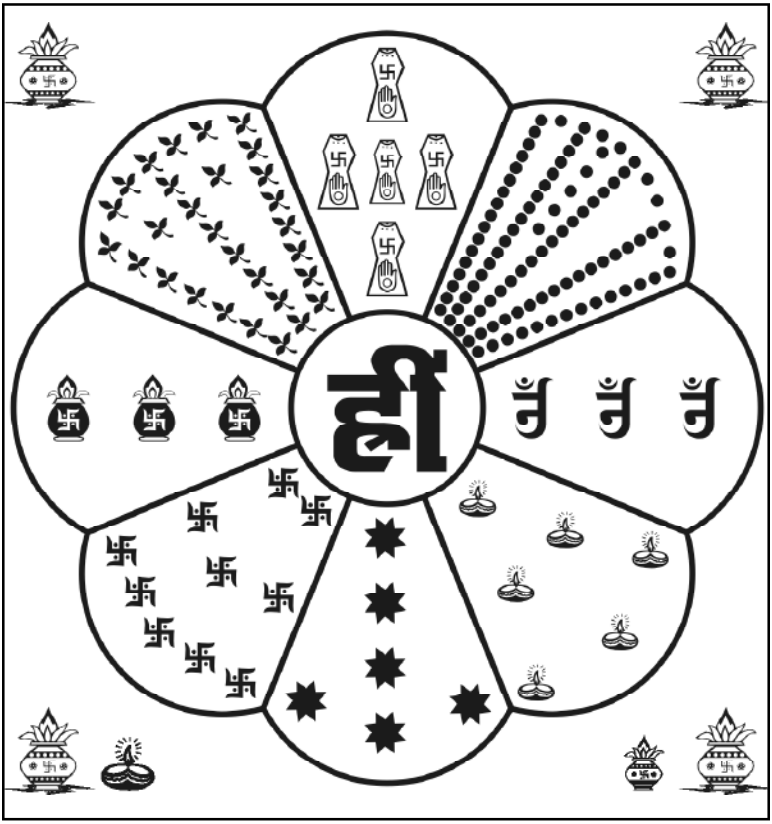

कुल अर्घ्य 156

प्रथम वलय - 5 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य	द्वितीय वलय - 9 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य
तृतीय वलय - 2 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य	चतुर्थ वलय - 28 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य
पंचम वलय - 4 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य	षष्टम वलय - 93 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य
सप्तम वलय - 2 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य	अष्टम वलय - 5 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य

कर्मदहन विधान

स्थापना

कर्म जाल में उलझा चेतन, सिद्ध स्वरूपी विसराया।
इन्द्रिय जेता आत्म रसिक जिन, निराकार मन से ध्याया।।
अष्टम भूमि वासी जिनवर, श्रद्धा से आह्वान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मै, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-मुक्त-श्री-सिद्ध-परमेष्ठी-समुह! अत्र-अवतर-अवतर संवोषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-मुक्त-श्री-सिद्ध-परमेष्ठी-समुह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-मुक्त-श्री-सिद्ध-परमेष्ठी-समुह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

काली घटाएँ कर्मों की नित, मन अन्तस् में उमड़ रहीं।
पाप नीर से भरी हुई ये, भयकारी बन कड़क रहीं।।
भक्तिभाव की वर्षा कर मैं, कर्मों का अवसान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-श्री-सिद्ध-परमेष्ठीभ्यः नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

जीवन और जगत का मेला, मोह डोर से बँधा हुआ।
राजाओं-सा आज दिखे जो, रंक बना कल रूँधा हुआ।।
राग द्वेष मद कर्म शृंखला, बन्धोदय अविराम हरूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मै, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-श्री-सिद्ध-परमेष्ठीभ्यः नमः संसार-ताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

श्रद्धा की वेदी में जिनवर, आन विराजो करुणाधार।
भव वर्धक सब कर्म विनाशूँ, भक्ति ध्यान का पा आधार।।
कर्म विनाशी शिवपुर वासी, अक्षय पद सम्मान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-श्री-सिद्ध-परमेष्ठीभ्य: नम: अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

मन उपवन की क्यारी में कुछ, काम भाव के फूल खिले।
आकर्षित पर को करके ये, क्षण भर में ही घुले मिले।।
काम वासना के कीचड़ में, कमल पुष्प वरदान वरूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-श्री-सिद्ध-परमेष्ठिभ्य: नम: काम-बाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

तन-मन की नित भूख मिटाने, रोज गुनाहें करता हूँ।
मन की कमजोरी नासमझी, प्रतिदिन आहें भरता हूँ।।
नाशवान तन से तप करके, क्षुधा रोग अवसान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्य: नम: क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

ईर्ष्या से भरकर मन मेरा, निज ईश्वर को भूल गया।
पद वैभव सम्मान ज्ञान पा, अहंकार में फूल गया।।
ध्यान दीप ले तिमिर मिटाऊँ, प्रगटित केवलज्ञान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व कर्म रहित अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्य: नम: मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

देह रहित होने को निशदिन, देह सहित तप तपते हैं।
धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यानकर, अष्ट कर्म को दहते हैं।।
निज में निज का अवलोकन कर, तीन लोक का ज्ञान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः नमः अष्ट-कर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

पुण्योदय का फल अरिहन्ता, शुद्धभाव प्रगटाता है।
चरणों में फल अर्पित करता, पाप भाव विनशाता है।।
आत्म ध्यान का धनुष बाण ले, कर्मों पर संधान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः नमः मोक्ष-महाफल-प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

कर्म वृक्ष की आठ डालियाँ, डेढ़ शतक दो कम पत्ते।
शूल चुभाते फूल बिछाते, जन्ममरण रोते हँसते।।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ चढ़ाकर, अरिध्वंसी गुणगान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः नमः अनर्घ-पद-प्राप्ताय-अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम वलय

दोहा- **कर्म अनन्ता नाशकर, पाया पद अविकार।**
पुष्पांजली क्षेपण करूँ, मिटे कर्म परिवार।।

(प्रथम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(ज्ञानावरण कर्मनाशक सिद्ध परमेष्ठी के 6 अर्घ्य)

इन्द्रिय मन से बाह्य वस्तुएँ, जीव सदा जाना करता।
"अवग्रहेहावाय धारणा" से, सबको माना करता।।
तीन शतक छत्तीस भेद का, सभी आवरण नाश किया।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, सम्यग् ज्ञान प्रकाश दिया।।1।।

ॐ ह्रीं मतिज्ञानावरण-कर्म-विनाशनाय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति ज्ञान से गहरे जाने, वही ज्ञान श्रुत ज्ञान कहा।
ग्यारह अंगम् चौदह पूर्वम्, असंख्यात है भेद महा।।
इन्द्रिय मन बुद्धि से जाने, जो परोक्ष कहलाता है।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, श्रुत आवरण नशाता है।।2।।

ॐ श्रुतज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

द्रव्य क्षेत्र अरुँ काल भाव से, रूपी वस्तु को जाने।
षट् विध त्रय विध भेद कहे जो, क्षयोपशम आवरण माने।
चारो गतियों के जीवों को, अवधिज्ञान हो सकता है।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, निरावरण अघ रहता है।।3।।

ॐ ह्रीं अवधिज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवधिज्ञान से ज्यादा जाने, मन की सारी बातों को।
वक्र ऋजु दुनियादारी के, मन उठते ख्यालातों को।।
मनः पर्यय जो शुद्ध ज्ञान है, झीना पर्दा लगा हुआ।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, रहित आवरण सजा हुआ।।4।।

ॐ ह्रीं मनःपर्यय-ज्ञान-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

त्रैकालिक गुण द्रव्य पर्यायें, एक साथ ही जान रहे।
उसी ज्ञान पर पड़ा आवरण, उसे हटाने ध्यान करें।।

ज्ञानावरण रहित हो जाए, केवलज्ञान उदित कर दो।
अर्घ चढ़ाऊँ सब सिद्धों को, आतम को प्रमुदित कर दो॥5॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

पंचज्ञान आवरण विनाशा, त्रिभुवन युगपत झलक गया।
केवलज्ञान जो लोकोज्ज्वल था, अन्तस् में ही प्रगट भया॥
संशय विभ्रम ज्ञान नाशकर, मौन ज्ञान मुखरित कर दो।
अर्घ चढ़ाऊँ हे अविनाशी, सिद्ध गुण आतम भर दो॥6॥

ॐ ह्रीं पंचज्ञानावरण-कर्म-रहिताय-केवलज्ञान-सम्पन्न-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय वलय

दर्शनावरणी नाशकर, पाय दर्श अनन्त।
सिद्ध प्रभु की वंदना, करते सारे सन्त॥

(द्वितीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(दर्शनावरण कर्म नाशक सिद्ध परमेष्ठी के 10 अर्घ्य)

आँखों से वस्तु अवलोके, चक्षु दर्शनावरण कहा।
असंख्यात है भेद निराले, क्षयोपशम से जिसे कहा॥
नयन बिना अवलोके त्रिभुवन, सिद्ध प्रभु सुखकारी है।
चक्षु दर्शनावरण विनाशी, अद्भूत गुण के धारी हैं॥1॥

ॐ ह्रीं चक्षु-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्तु छूकर आठ रूप में, गुण अवगुण को जान रहे।
रसना घ्राण गंध स्वाद से, अप्रगट पहचान रहे॥
कर्णेन्द्रिय से शब्द श्रवण कर, ज्ञाता बाईस विषय कहे।
अचक्षु दर्शनावरण विनाशी, सिद्ध प्रभु की विनय करे॥2॥

ॐ ह्रीं अचक्षु-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपी जो जग की वस्तु है, उसे आत्म से दर्श करें।
अवधि दर्शनावरण-कर्म-है, जिसे प्रभुवर नष्ट करें।।
षट् प्रकार से जाने भविजन, अवधि आवरण दहन करूँ।
सिद्ध प्रभु हे-कर्म-विनाशी, अर्घ चढ़ाकर नमन करूँ।।3।।

ॐ ह्रीं अवधि-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन काल की सब पर्यायें, द्रव्यों की वे जान रहें।
दर्शन भी उस क्षण ही करते, युगपत हम हैं मान रहे।।
केवल दर्शनावरण मिटाकर, सिद्धशिला को पाया है।
सर्व दर्शी उन सिद्ध प्रभु को, पूरण अर्घ्य चढ़ाया है।।4।।

ॐ ह्रीं केवल-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रम करते या हुए प्रमादी, निद्रा प्राणी लेते हैं।
बैठे सोते झपकी लेकर, दूर थकान कर देते हैं।।
निद्रावरणी करम विनाशे, तपधारी साधक मुनिराज।
सिद्ध प्रभु को नितप्रति वंदू, कर्म-विनाशे निद्राराज।।5।।

ॐ ह्रीं निद्रा-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निद्रा निद्रा-कर्म-उदय से, नयन मूँदकर सो जावे।
कोई उठावे उठ ना पावे, दर्शनावरणी-कर्म-सतावे।।
तज प्रमाद को आत्म ध्यान कर, निद्रानिद्रा नाश किया।
सिद्ध प्रभु को नित प्रति वंदू, अर्घ चढ़ा सुख वास लिया।।6।।

ॐ ह्रीं निद्रा-निद्रा-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उसनिंदा सा जगता सोता हल्की निद्रा में रहता।
प्रचला में अस्थिर बुद्धि से, गफलत में ही वह रहता।।

तज प्रमाद को आत्म ध्यान कर, प्रचला-कर्म-नशाया है।
सिद्ध प्रभु को नित प्रति वंदू, अर्घ चढ़ा सुख पाया है।।7।।

ॐ ह्रीं प्रचला-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

डटकर खाकर श्रमकर थकते, या आलस कर सो जावें।
अंग चलावें लार बहावें, होश रहे ना खो जावे।।
तज प्रमाद को आत्म ध्यान कर, प्रचलाप्रचला नाश किया।
सिद्ध प्रभु को नितप्रति वंदू, अर्घ चढ़ा सुख वास लिया।।8।।

ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचला-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बड़ बड़ बोले सोते में भी, उठकर वह कई काम करे।
याद रहे ना क्या-क्या कीना, अपने को बदनाम करे।।
नाश किया स्त्यानगृद्धि को, दर्शनावरण से मुक्त हुए।
सिद्ध प्रभु को नित प्रति वंदू, अनन्तदर्शन युक्त हुए।।9।।

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धि-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

धत्ता- **जय-कर्म-विजेता देहातीता, सिद्ध पुनीता नमन करूँ।**
जय जग अवलोके शिवपद भोगें अर्घ चढ़ाऊभजन करूँ।।10।।

ॐ ह्रीं सकल-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय वलय

सुख दुख पाते जीव सब, कर्मों का संयोग।
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, दूर करे भव रोग।।

(तृतीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(वेदनीय-कर्म-नाशक सिद्ध परमेष्ठी के 3 अर्घ्य)

सुख का साधन भोग निरन्तर, साता-कर्म-निकट होवें।
भोग उपभोग की सारी वस्तु, अनुकूल हो प्रगट होवें॥
पुण्य घटावें पाप बढ़ावें, प्रभु ने सर्व विनाश किया।
सिद्ध-शिला में स्थिर होकर, शाश्वत निज निवास किया॥1॥

ॐ ह्रीं साता-वेदनीय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन वच तन के दुख मूलक जो, ईर्ष्या द्वेषक घृणा विचार।
निष्ठुर वचना अस्त्र शस्त्र का, प्रतिकुल होता व्यवहार॥
कर्म असाता दुख देकर के, जीवन को बर्बाद करे।
सिद्ध प्रभु जी इन्हें नाशकर, निज आतम आजाद करें॥2॥

ॐ ह्रीं असाता-वेदनीय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

साता असाता जीव को, सुख दुख देते आन।
कर्म विनाशे वेदनीय, बने सिद्ध भगवान॥3॥

ॐ ह्रीं वेदनीय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ वलय

दोहा- **मोह महारिपु घेरकर, देता है संताप।**
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, मिटे उपद्रव पाप॥
(चतुर्थ-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(मोहनीय-कर्म-नाशक सिद्ध परमेष्ठी के 29 अर्घ)

काल अनादि से मिथ्यातम, जिन श्रद्धा न कर पाया।
गति-गति में चेतन भ्रमता, नित्य निरन्तर दुख पाया॥

सम्यक प्रगटे मिथ्या विनशे, जिन मारग रुचि से ध्याऊँ।
सिद्ध प्रभु की वंदना करके, मिथ्यातम को दूर हटाऊँ॥1॥

ॐ ह्रीं मिथ्यात्व-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दुविधा में रहता यह प्राणी, सम्यक मिथ्या में डोले।
रागी विरागी दोनों पुजें, सम्यक आँखें ना खोले॥
मुक्त करो भ्रम जाल से मुझको, मिश्र भाव को तजता हूँ।
सिद्ध प्रभु की करूँ वंदना, अर्घ समर्पित करता हूँ॥2॥

ॐ ह्रीं सम्यक-मिथ्यात्व-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक दर्शन होने पर भी, भाव मलिन हो जाते हैं।
चल मल या आगाढ़ दोष पा, आकांक्षा से ध्याते हैं॥
मेरा मंदिर, मेरे भगवन, चिन्तामणी पारस भगवान।
सम्यक प्रकृति ऐसा सोचे, सिद्ध प्रभु हैं मुक्त महान॥3॥

ॐ ह्रीं सम्यक-प्रकृति-मिथ्यात्व-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **भव वर्धक कारण कहा, क्रोध अनन्तानन्त।**
सिद्ध प्रभु ने त्याग कर, पाया शान्ति अनन्त॥4॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धि क्रोध-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहं भाव मिथ्यात्व सह, बढ़ा रहा संसार।
सिद्ध प्रभु ने नाश कर, खोला मुक्ति द्वार॥5॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धि-मान-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया ठगती है सदा, धर्म नाश करवाय।
सिद्ध प्रभु ने नाश कर, आत्म धर्म विकसाय॥6॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धि-माया-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मूर्च्छा से बंधन रहे, लोभ सदा भटकाय।
सिद्ध प्रभु ने त्याग कर, निज स्वरूप को पाय॥7॥

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धि-लोभ-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक देश चारित्र को, अप्रत्यख्यान नशाय।
छः महिने के पूर्व ही, क्षमाधार जिनध्याय॥8॥

ॐ ह्रीं अप्रत्यख्यानावरण-क्रोध-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हड्डी रेखा मान की, मन भीतर रह जाये।
स्वाभिमान को प्रगट कर, सिद्ध प्रभु गुणगाय॥9॥

ॐ ह्रीं अप्रत्यख्यानावरण-मान-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

माया ठगनी सदा नचावे, देश व्रती न बनने पावें।
त्रय योगों को सरल बनाऊँ, सिद्ध प्रभु को निशदिन ध्याऊँ॥10॥

ॐ ह्रीं अप्रत्यख्यानावरण-माया-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर पदार्थ की इच्छा होवे, अणुव्रतों को नाहीं लेवें।
सिद्ध प्रभु ने लोभ नशाया, सबको मोक्षमार्ग बतलाया॥11॥

ॐ ह्रीं अप्रत्यख्यानावरण-लोभ-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्यख्यानावरण कषाया, महाव्रतों का करे सफाया।
एक पक्ष में क्रोध विनाशे, सिद्ध प्रभु मन धर्म विकासे॥12॥

ॐ ह्रीं प्रत्यख्यानावरण-क्रोध-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं मेरा का भाव त्याग कर, अणुव्रतों को मन से धार कर।
सिद्ध प्रभु का ध्यान लगाऊँ, प्रत्यख्यानवरण नशाऊँ॥13॥

ॐ ह्रीं प्रत्यख्यानावरण-मान-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तरमन से कष्ट मिटावे, सरल सहज जीवन प्रगटावें।
माया प्रत्यख्यान नशावे, सिद्ध प्रभु को अर्घ चढ़ावें॥14॥

ॐ ह्रीं प्रत्यख्यानावरण-माया-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्यख्यानी लोभ कषाई सन्तोषी बन कर्म-नशाई।
जग वस्तु से दूर ही रहता, सिद्ध प्रभु को हर क्षण भजता॥15॥

ॐ ह्रीं प्रत्यख्यानावरण लोभ-कर्म-रहिताय भी सिद्ध परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक मुहूरत के भीतर ही, क्रोध क्षमा में परिणमता।
नाम संज्वलन क्रोध कषाया, हरती मन की कलमषता॥
मुनिराज के मन भीतर वह, जल रेखा सम प्रगटित है।
इन्हें नाशकर सिद्ध बने जो, वन्दन अर्घ समर्पित है॥16॥

ॐ ह्रीं संज्वलन-क्रोध-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाव्रती बन ज्ञान ध्यान में, लीन रहे मुनिराज सदा।
तपसी या उपदेशी बनकर, स्वाभिमानी बन रहे मुदा॥
निज कृत्यों के अधिकार का, अहंकार क्षण भर रहता।
सिद्ध प्रभु हे मान विनाशी, अर्घ समर्पित हूँ करता॥17॥

ॐ ह्रीं संज्वलन-मान-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यथाजात मुद्रा में मुनिवर, यथाख्यात ना हो पाये।
मन भीतर माया की छाया, क्षणभर को भी भरमाये॥
सरल स्वभावी मुनिराज जी, माया संज्वलन तजते।
सिद्ध स्वरूपी गुण प्रगटित कर, निज आतम स्थिर रहते॥18॥

ॐ ह्रीं संज्वलन-माया-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्त्री भोजन राज चोर की, चार कथाओं को छोड़े।
स्वपरमारथ प्रगट करन को, पर पदार्थ से मुख मोड़े॥
संज्वलन है लोभ कषाया, इससे रहित करो जिनराज।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, पाया निज में निज का राज॥19॥

ॐ ह्रीं संज्वलन लोभ-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **नौ कषाय में हास्य है-कर्म-बन्ध करवाय।**
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ जीता हास्य कषाय॥20॥

ॐ ह्रीं हास्य-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विषयों के प्रति नेह हो, रति करम जब आय।
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ, जीतू रति कषाय॥21॥

ॐ ह्रीं रति-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिकूल जो वस्तु हो, अरति अरुँचि करवाय।
सिद्ध प्रभु वंदन करूँ, जीतू अरति कषाय॥22॥

ॐ ह्रीं अरति-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इष्टानिष्ट के योग से, होता शोक कषाय।
सिद्ध प्रभु वंदन करूँ, शोक सभी नश जाय॥23॥

ॐ ह्रीं शोक-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशंका अनिष्ट की, सातों भय प्रगटाय।
सिद्ध प्रभु वंदन करूँ, जीतू भय कषाय॥24॥

ॐ ह्रीं भय-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निद्यं वस्तु को देखकर, मन में ग्लानि आय।
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ, नाशूँ जुगुप्सा कषाय॥25॥

ॐ ह्रीं जुगुप्सा-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नारी मन नर कामना, जाग्रत प्रीति हेत।
सिद्ध प्रभु वंदन करूँ, नाशूँ स्त्री वेद॥26॥

ॐ ह्रीं स्त्री वेद-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुष वेद के उदय से, नारी इच्छा होय।
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ, पुंवेदी सब खोय॥27॥

ॐ ह्रीं पुरुष वेद-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नर नारी दोनों चहें, तीव्र काम विकार।
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ, नाशूं वेद विचार॥28॥

ॐ ह्रीं नपुंसक-वेद-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

मोहनीय की सत्तर कोड़ा, कोड़ी सागर आयु है।
एक मुहूरत में छँट जाता, ध्यान की चलती वायु है॥
सबसे पहले बंधता मिटता, मोहमहा मद कारी है।
सिद्ध प्रभु ने मोह विनाशा, अर्घ चढ़ा सुखकारी है॥29॥

ॐ ह्रीं महामोह-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम वलय

दोहा- **गतियों का बंधन सहे, कारण आयु कर्म।**
पीताक्षत क्षेपण करूँ, मिले सदा शिव शर्म॥
(पंचम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(आयु कर्मनाशक सिद्ध परमेष्ठी के 5 अर्घ्य)

रहना चाहे जीव जहाँ ना, पर रहना पड़ता निश्चित।
शीत ऊष्ण अरुँ मार काट का, दुक्ख नरक में वचनातीत॥
दस हजार से तैंतीस सागर, नरकायु दुख सहता है।
सिद्ध प्रभु नरकायु नाशें, भाव यही मम रहता है॥1॥

ॐ ह्रीं नरकायु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक श्वास में बार अठारह, जनता मरता हैं प्राणी।
तीन पल्य उत्कृष्ट आयु ले, कष्टमयी है जिन्दगानी॥
बध बन्धन अपमान क्षुधातुर, तिर्यंचों का जीवन है।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, कर्म-रहित जो पावन हैं॥2॥

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चायु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भोग भूमि में ऊँची आयु, तीन पल्य नर की होती।
कर्म भूमि की आयु नीची, अर्न्तमुहूरत में खोती॥
मध्यायु की सीमा ना है, कल्याणक शुभ पाते है।
मानुष आयु-कर्म-नाशकर, सिद्धालय पा जाते हैं॥3॥

ॐ ह्रीं मनुष्यायु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवायु तैंतीस सागर की, चर्चा में ही बीत रहा।
दश हजार की जघनायु तो, मानस दुख में रीत रहा॥
सम्यक मिथ्या-दृष्टि देवा, चतुर्णिकाय में होते हैं।
सिद्ध प्रभु देवाधिदेव है, निजानन्द रस पीते है॥4॥

ॐ ह्रीं देवायु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

आयु-कर्म-विनाशक जीवा, अवगाहन गुणधार रहे।
निराबाध अव्यय आत्मिक सुख, दीर्घकाल स्वीकार रहें॥
निराकार चेतन्य स्वरूपी, खड्गासन पद्मासन है।
कर्म नाशकर सिद्ध बनूँ मैं, अर्घ समर्पित पावन है॥5॥

ॐ ह्रीं आयु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूणार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्टम वलय

दोहा- **चतुर्गति की गति विधि, नाम-कर्म-से पाय।**
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, नाम-कर्म-नश जाय॥

(सप्तम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(नामकर्म नाशक सिद्ध परमेष्ठी के 94 अर्घ्य)

निन्दक हिंसक लम्पट जीवा, कृष्ण लेश्या से युक्त हैं।
आरंभी बैरी मिथ्यात्वी, धर्म विनय से मुक्त हैं॥
मन की ऐसी कुवृति से, नरक गति हर क्षण बंधता।
सिद्ध प्रभु जी मुझे बचाएँ, श्रद्धा से वन्दन करता॥1॥

ॐ ह्रीं नरकगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कपट वेष धर पर को ठगता, ढोंग धरम का करता है।
करें दिखावा और छलावा, आर्त ध्यान रत रहता है॥
मन की ऐसी कुवृति से, तिर्यञ्च गति हर क्षण बंधती।
सिद्ध प्रभु जी मुझे बचाएँ, श्रद्धा से वन्दन करता॥2॥

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्द कषाई मृदुस्वभावी, विनय शील अल्पारंभी।
व्रत ना लेवें दोष सँभाले, स्वर्ग मोक्ष मग प्रारंभी॥

मन की ऐसी सदवृत्ति से, मनुष्यगति हर क्षण बंधता।
सिद्ध प्रभु जी पार लगावें, श्रद्धा से वंदन करता।।3।।

ॐ ह्रीं मनुष्यगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शम दम यम नियम के कारण, देवगति बंध जाती है।
मिथ्या सम्यक साधन से भी, रिद्धि सिद्धि मिल जाती है।।
मन की ऐसी सद्वृत्ति से, देवगति हर क्षण बंधती।
सिद्ध प्रभु जी पार लगायें, श्रद्धा से वन्दन करता।।4।।

ॐ ह्रीं देवगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भू जल पावक पवन वृक्ष सब, कष्ट सदा ही पाते हैं।
वध बन्धन मौसम को सहते, हर क्षण दुःख उठाते हैं।।
जाति-नाम कर्मों से रहिता, सिद्ध प्रभु का ध्यान करे।
ऐकेन्द्रिय पर्याय मिले ना, ऐसा सम्यक काम करे।।5।।

ॐ ह्रीं एकेन्द्रिय-जाति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **दो इन्द्रिय जो जीव हैं, सहते कष्ट अपार।**
जाति-कर्म-को नाशकर, सिद्ध बने अविकार।।6।।

ॐ ह्रीं दोइन्द्रिय-जाति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खटमल जूँ चींटी बने, त्रय इन्द्रिय को धार।
जाति-कर्म-को नाशकर, सिद्ध बने अविकार।।7।।

ॐ ह्रीं त्रिइन्द्रिय-जाति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चउइन्द्रिय मच्छर बने, मक्खी कीट पतंग।
दुःख योनि नाशे प्रभु, सिद्ध बने निसंग।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्गति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचेन्द्रिय चारो गति, क्रूर शान्त हैं जीव।
जाति-कर्म-को नाश कर, सिद्ध बने सुजीव॥9॥

ॐ ह्रीं पंचेन्द्रिय-जाति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नर तीर्यञ्च के गात का, औदारिक तन-नाम।
नाश बने प्रभु सिद्ध जिन, पाया शाश्वत धाम॥10॥

ॐ ह्रीं औदारिक-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव नारकी जीव हैं, वैक्रियक तन धार।
नाश बने प्रभु सिद्ध जिन, किया आत्म उद्धार॥11॥

ॐ ह्रीं वैक्रियक-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि मस्तक पुतला जनें, संयम रक्षा हेत।
आहारक तन कर्मदह, पाया सिद्ध सुखेत॥12॥

ॐ ह्रीं आहारक-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन कान्ति पैदा करें, तेजस-नाम शरीर।
नाश बनें प्रभु सिद्ध जिन, नमन हरे भवपीर॥13॥

ॐ ह्रीं तेजस-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म पिण्ड तन धारता, कार्मण-कर्म-कहाय।
कर्म रहित सिद्धात्मा, पूरण अर्घ चढ़ाय॥14॥

ॐ ह्रीं कामर्ण-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

जीव ग्राह्य पुद्गल स्कन्धा, औदारिक तन इससे बनता।
इन्हें नाशकर सिद्ध बने हैं, उनको शत-शत बार नमे हैं॥15॥

ॐ ह्रीं औदारिक-बन्धन-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव नारकी तन जो पाते, वैक्रियक बन्धन कहलाते।
इन्हें नाशकर सिद्ध बने हैं उनको शत-शत बार नमें हैं॥16॥

ॐ ह्रीं वैक्रियक-बन्धन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहारक बन्धन तन जानो, छिद्र रहित उसको पहचानो।
इन्हे नाशकर सिद्ध बने हैं, उनको शत-शत बार नमें हैं॥17॥

ॐ ह्रीं आहारक-बन्धन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तैजस बन्धन-नाम-कर्म-है, कान्ति देना इसका धर्म है।
इन्हें नाशकर सिद्ध बने है, उनको शत-शत बार नमें हैं॥18॥

ॐ ह्रीं तैजस-बंधन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुद्गल आत्म प्रदेशी बंधते, नीर क्षीर सम घुलते मिलते।
कार्मण बन्धन-कर्म-नशाया, सिद्ध प्रभु को अर्घ चढ़ाया॥19॥

ॐ ह्रीं कार्मण-बन्धन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- छिद्र रहित चिकना बदन, औदारिक संघात।
देह रहित परमात्मा, चिन्मय सुख बरसात॥20॥

ॐ ह्रीं औदारिक-संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुद्गल परमाणु मिले, विक्रिया तन निर्माण।
तन रहित है चेतना, ज्यों सिद्ध भगवान।।21।।

ॐ ह्रीं विक्रिया-संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहारक संघात तन, सिद्ध प्रभु के नाहीं।
सर्व-कर्म-से मुक्त हो, सिद्ध बसे निजमाहीं।।22।।

ॐ ह्रीं आहारक-संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तैजस तन की कान्ति से, रहित हुए जिन नाथ।
तैजस वर्गणा मुक्त जो, सदा नमाउ माथ।।23।।

ॐ ह्रीं तैजस संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्मण संघातक बने, तिल तैल सम बंध।
सर्व-कर्म-को नाशकर, सिद्ध बने निर्बन्ध।।24।।

ॐ ह्रीं कार्माण-संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

सुन्दर रूप सुढौल-सी काया, समचतुस्र की ऐसी माया।
सिद्ध प्रभु तन नाश किया है, शुद्धातम प्रवास किया है।।25।।

ॐ ह्रीं समचतुरस्त्र-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊपर मोटा नीचे पतला-पादप वट सम तन है बदला।
संस्थान न्यग्रोध नशाया सिद्ध शुद्ध तन केवल छाया।।26।।

ॐ ह्रीं न्यग्रोध-परिमण्डल-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय नाम स्वाति संस्थाना, वामी सम आकार है माना।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, निराकार चिद्रुप है पाया॥27॥

ॐ ह्रीं स्वाति-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुब्जक कुबड़ा-सा तन पाया, कर्मोदय से हीन कहाया।
देह रहित प्रभु सिद्ध कहाये, तीन लोक जन शीश नवायें॥28॥

ॐ ह्रीं कुब्जक-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ठिगना बौना वामन नामा, देख देख कर हंसे जमाना।
सिद्ध प्रभु ने कर्म नशाया, रूपातीत रूप को पाया॥29॥

ॐ ह्रीं वामन-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दरता से रहित आकारा हो विचित्र बेडोल शरीरा।
हुण्डक तन कर्मोदय नाशी सिद्धालय के शाश्वत वासी॥30॥

ॐ ह्रीं हुण्डक-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगोपांग करम से बनता, औदारिक तन अंग पनपता।
सिद्ध प्रभु तन अंग रहिता, निराकार है पूज्य पुनिता॥31॥

ॐ ह्रीं औदारिक-अंगोपांग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगोपांग रचना करवाता, देव नरक वैक्रियक कहाता।
सिद्ध प्रभु तन अंग रहिता, निराकार है पूज्य पुनिता॥32॥

ॐ ह्रीं वैक्रियक अंगोपाग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिराज मस्तक से निकला, आहारक तन सुन्दर उजला।
अंगोपांग आहारक जानो, सिद्ध प्रभु के नहीं बखानो॥33॥

ॐ ह्रीं आहारक अंगोपांग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्थि नस अरुँ कील कहावे, बज्र समा तन ठोस बनावे।
वज्रवृषभनाराच कहाता, सिद्ध बने जो इसे नशाता॥34॥

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराच-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्थि कील हो वज्र समाना, नस बन्धन ढ़ीला है माना।
संहनन वज्र नाराच कहाता, सिद्ध बने जो इसे नशाता॥35॥

ॐ ह्रीं वज्रनाराच-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नस कीले होते साधारण, ठोस अस्थि शक्ति का कारण।
संहनन वह नाराच कहाता, सिद्ध बने जो इसे नशाता॥36॥

ॐ ह्रीं नाराच-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से तन की अस्थि, अर्ध कीलित सम होती शक्ति।
संहनन अर्ध नाराच कहाता, सिद्ध बने जो इसे नशाता॥37॥

ॐ ह्रीं अर्धनाराच संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से अस्थि किनारे, कीलित है निज शक्ति सहारे।
कीलक संहनन कर्म नशाया, सिद्ध बने प्रभु नमन कराया॥38॥

ॐ ह्रीं कीलक-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नस जालों से अस्थि बँधी है, कर्मोदय से सारी सधी हैं।
संहनन छटवाँ प्रभु विनाशे, सिद्ध शिला शाश्वत प्रवासे॥39॥

ॐ ह्रीं असंप्राप्तासृपाटिका-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **कोमलता को धारता, नाम-कर्म-स्पर्श।**
पुद्गल गुण को नाशकर, सिद्ध विराजे अर्श॥40॥

ॐ ह्रीं कोमल-स्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से कड़क तन, धारे जीव अनन्त।
कर्कश परसन नाशकर, सिद्ध बने हैं सन्त।।41।।

ॐ ह्रीं कर्कशस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन अवयव चिकना बने, नाम-कर्म-स्निग्ध।
सिद्ध प्रभु ने नाश किया, कर्मोदय सन्दिग्ध।।42।।

ॐ ह्रीं स्निग्धस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रुक्ष नाम स्पर्श गुण, संसारी के होय।
कर्म घुमावें जगत में, मुक्त बने सब खोय।।43।।

ॐ ह्रीं रुक्ष स्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रस थावर सब जीव हैं, धारे गुरु स्पर्श।
भारी परसन नाशकर, सिद्ध बने सहर्ष।।44।।

ॐ ह्रीं गुरुस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लघु कर्म स्पर्श से, हल्का जीव कहाय।
आत्म ज्ञान बिन भ्रमत है, सिद्ध कर्म नशाय।।45।।

ॐ ह्रीं लघुस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी धारे शीत तन, कर्मोदय से जान।
नीरादिक शीतल यहाँ, सिद्ध बने सब हान।।46।।

ॐ ह्रीं शीतस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उष्ण कर्म स्पर्श का, गरम रहे यह देह।
सिद्ध प्रभु ने नाशकर, पाया रूप अदेह।।47।।

ॐ ह्रीं ऊष्णस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हर तन का इक स्वाद है, कर्मोदय रस नाम।
अम्ल रस गुण नाशकर, सिद्ध बने निष्काम।।48।।

ॐ ह्रीं अम्लरस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काया भीतर मधुर रस, कर्मोदय से होय।
दुख पाते तन धारते, सिद्ध बने अघखोय।।49।।

ॐ ह्रीं मधुररस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन चेतन में कटुक रस, सदा बने गुण रूप।
पुद्गल कर्मन नाशकर, जीव बने चिद्रुप।।50।।

ॐ ह्रीं कटुकरस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधि बन्धन है कर्म का, कसैला रस निर्माण।
पुद्गल कर्म नशाय कर, पाया पद निर्वाण।।51।।

ॐ ह्रीं कसायरस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीखा रस निर्मित करे, कर्म शक्ति संयोग।
पुद्गल कर्म नशाय कर, सिद्ध बने तज योग।।52।।

ॐ ह्रीं तिक्तरस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आक तूल सम हल्का, ना-ना लोहे समभारी।
नाम कर्म अगुरु लघुत्व है, नाशे सिद्ध अविकारी।।53।।

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्व-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

सुरभित तन सब जीव चहत है, कर्म उदय से तन में बनत है।
सुरभि नाम करम नश पाया, सिद्ध प्रभु जी अचल अकाया।।54।।

ॐ ह्रीं सुरभि-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दुखदायी दुर्गन्ध शरीरा, कर्मोदय से बने अधीरा।
नाम असुरभि कर्म नशाया, सिद्ध प्रभु जी अचल अकाया॥55॥

ॐ ह्रीं असुरभि-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म शुभाशुभ उदय कहावें, पीत शरीरा प्राणी पावें।
सिद्ध प्रभु हैं कर्म विनाशी, नमन करूँ पाऊँ सुखराशि॥56॥

ॐ ह्रीं पीतवर्ण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हरित वर्ण का देह घटावें, शुभ अशुभ जो वर्ण कहावें है।
सिद्ध प्रभु हैं कर्म विनाशी, नमन करूँ पाऊँ सुखराशि॥57॥

ॐ ह्रीं हरितवर्ण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रक्त वर्ण कर्मोदय कारण, लाल शरीरा करता धारण।
सिद्ध प्रभु हैं कर्म विनाशी, नमन करूँ पाऊँ सुखराशि॥58॥

ॐ ह्रीं रक्तवर्ण कर्म रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण शुभाशुभ श्वेत कहावे, कर्मोदय से तन में पावे।
सिद्ध प्रभु हैं कर्म विनाशी, नमन करूँ पाऊँ सुखराशि॥59॥

ॐ ह्रीं श्वेतवर्ण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काला तन शुभ अशुभ कहाता, कर्मोदय से जीव है पाता।
सिद्ध प्रभु है कर्म विनाशी, नमन करूं पाऊ सुखराशि॥60॥

ॐ ह्रीं कृष्ण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पर्याप्तक नर पशुगति प्राणी, पाप कमाकर मरण करें।
नरकायु बाँधे जो जीवा, दुख पाकर भव भ्रमण करें॥
मरण बाद अरुँ जन्म से पहले, विग्रह गति में पुर्वाकार।
नरक गति आनुपूर्वी नाशे, अर्घ चढ़ा वन्दन शतबार॥61॥

ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वी-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गति के जीव कदाचित, जन्म धरे तिर्यंच गति।
पूर्व तनु आकार धारते, आनुपूर्वी तिर्यंच गति।।
त्रस थावर तिर्यंच गति के, जीव सदा दुख पाते हैं।
कर्म नाशकर सिद्ध प्रभु जी, आत्मज्ञ कहलाते हैं।।62।।

ॐ ह्रीं तिर्यंचगत्यानुपूर्वी-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नरगति एक चौराहा जानो, चतुर्गति के जीव चलें।
मरण जन्म के मध्य काल में, आनुपूर्वी नर रूप ढलें।।
आनुपूर्वी गति रहिता जीवा, शुद्ध बुद्ध सिद्धात्म बने।
निज उपकारी नर जीवन पा, प्रभु पुजकर आप्त नमे।।63।।

ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वी-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तकाल में सम्यक मिथ्या, भावो से जो देव मरें।
नर पशु गति के जन्म से पहले, पूर्वरूप आकार धरें।।
विग्रह गति देवानुपूर्वी से, सिद्ध प्रभुजी रहित हुए।
अर्घ चढ़ाकर पूजा करलूँ, नंत गुणों से सहित हुए।।64।।

ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वी-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपने अपने योग्य थान पर, अंगोपांग करे निर्माण।
योग्य थान से हटकर रचना, रूप बिगाड़े तन में आन।।
सुन्दर और असुन्दर रचना, नाम कर्म निर्माण करे।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, निजानन्द रसपान करे।।65।।

ॐ ह्रीं निर्माण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपने ही अंगों द्वारा जो, अपने तन का घात करे।
सिंग दंत या उदर बढ़े, या हीनभाव स्वघात करे।।

कर्मोदय उपघात भयंकर, नाम कर्म कहलाता है।
पर उपकारी बनकर साधक, कर्म जला शिव पाता है॥66॥

ॐ ह्रीं उपघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंग दाढ़ नख डंक जहर जो, पर से सदा बचाता है।
शेर नाग बिच्छु मच्छर के, परघात उदय कहलाता है॥
नाम कर्म परघात उदय से, सिद्ध प्रभुजी मुक्त हुए।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, जिन भक्ति अनुरक्त हुए॥67॥

ॐ ह्रीं परघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से पर संतापित, करने वाला तेज प्रकाश।
सूरज वाहन पृथ्वी कायिक, आतप कर्म से रहता पास॥
आतप कर्मोदय धारी तो, भू में बसते जीव अनेक।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, अर्घ चढ़ाऊँ विनय समेत॥68॥

ॐ ह्रीं आतप-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चमचम करता शीत प्रकाशा, चन्द्र तारिका का उद्योत।
भू कायिक विमान चमकते, या चमके जुगनु खद्योत॥
नाम कर्म उद्योत नशाया, तप करके साधक मुनिराज।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, हे सिद्धालय के अधिराज॥69॥

ॐ ह्रीं उद्योत-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसके बलपर जीता प्राणी, श्वासोच्छवास कहाता है।
उसकी कीमत जाने बिन यह, व्यर्थ ही पाप कमाता है॥
सिद्ध प्रभु लोकाग्र विराजे, कर्म नाशकर श्वासोच्छ्वास।
श्वास रहित चैतन्य रूप हो, शुद्धातम में शाश्वत वास॥70॥

ॐ ह्रीं श्वासोच्छ्वास-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से चाल वृषभ गज, हंस सिंह सम कहलाता।
नाम विहायोगति प्रशस्ता, जिन आगम है बतलाता।।
सिद्ध प्रभु है कर्म विनाशी, स्थिर होकर निज ध्यायें।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, गमनागमन विनश जाये।।71।।

ॐ ह्रीं प्रशस्त-विहायोगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्दभ ऊँठ श्वान सम गमना, शोभा निज की घटा रही।
चाल असुन्दर अप्रशस्त ही, विहायोगति को बता रही।।
ऋजु गति से सिद्धालय जा, अचल विराजे कर्मातीत।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, गमनागमन मिटाओ मीत।।72।।

ॐ ह्रीं अप्रशस्तविहायोगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

नाम कर्म त्रस दुर्लभ जाने, दो त्रि-चऊ पंचेन्द्रिय माने।
दुर्लभ त्रस पर्याय को पाना, सिद्ध बने सब कर्मन हाना।।73।।

ॐ ह्रीं त्रस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

भू, जल, अगन, पवन अरुँ वृक्षा, स्थावर की करें सुरक्षा।
जीव दया निज धर्म बढ़ावे, कर्म नाशकर शिव पद पावें।।74।।

ॐ ह्रीं स्थावर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर रोके पर से रूक जावे, बादर तन स्थूल कहावें।
बादर नाम करम विनशाया, उन सिद्धों को अर्घ चढ़ाया।।75।।

ॐ ह्रीं बादर नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

ना दिखते ना मरते मारते, सुक्ष्म शरीरा जीव धारते।
सुक्ष्म नाम करम विनशाया, उन सिद्धो को अर्घ चढ़ाया।।76।।

ॐ ह्रीं सुक्ष्म-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्याप्ति आहार शरीरा, इन्द्रिय स्वासोच्छ्वास कहा।
भाषा मन छः पर्याप्ति हैं, निज क्षमता से वास रहा॥
पर्याप्ति एक-नाम-कर्म-है, संसारी धारण करते।
सिद्ध प्रभु जी इसे नाशकर, भव्यों के तारण बनते॥77॥

ॐ ह्रीं पर्याप्ति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से जीव पर्याप्ति, पूर्ण नहीं है कर पाते।
लब्ध अपर्याप्तक जीव कहाते, क्षुद्र भवों को अपनाते॥
निवृति अपर्याप्तक जीवा, पर्याप्ति को पूर्ण करे।
सिद्ध निरामय निजानन्द मय, कर्म अपर्याप्तक चूर्ण करें॥78॥

ॐ ह्रीं अपर्याप्ति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक शरीर का एक ही स्वामी, वनस्पति प्रत्येक बखानी।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, अर्घ चढ़ाकर शीश नवाया॥79॥

ॐ ह्रीं प्रत्येक-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक शरीर के नेक हैं स्वामी, अनंतकायिक साधारण नामी।
नित्य इतर निगोद नशाऊँ, सिद्ध भजुँ सिद्धालय पाऊँ॥80॥

ॐ ह्रीं साधारण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त धातुएँ तन की सारी, अपने अपने कक्ष रहें।
माँस मेद रस रक्त हड्डियाँ, शुक्र मज्जा तन रक्ष करें॥
स्वस्थ रहे तन-नाम-कर्म-की, स्थिर प्रकृति कहलाती।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, देह रहित है अविनाशी॥81॥

ॐ ह्रीं स्थिर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रोगों का घर यह तन सारा, आकुल व्याकुल मन रहता।
सप्त धातुएँ अस्थिर रहती, अस्थिर नाम करम कहता॥

कर्मोदय सब-नाम-कर्म-की, सिद्ध प्रभु ने विनशाया।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, सिद्ध प्रभु की पा छाया॥82॥

ॐ ह्रीं अस्थिर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देह सजाया लेप लगाया, फिर भी कान्ति बढ़ी नहीं।
"भक्ते सुन्दर रूपं" जाना, और सजावट चढ़ी नहीं॥
सुन्दर चेहरा नयन नासिका, शुभ कर्मो का प्रतिफल है।
सिद्ध प्रभु ने इसे विनाशा, निराकार तन अविचल है॥83॥

ॐ ह्रीं शुभनाम कर्म रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

विकृत है आकार देह का, मन भावन ना लगता है।
अंगोपांग भी सुन्दर ना है, अशुभ कर्म यह कहता है॥
जिन भक्ति निज ध्यान लगाकर, अशुभ कर्म का नाश करूँ।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, सिद्ध शिला में वास करूँ॥84॥

ॐ ह्रीं अशुभ-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा-सुभग नाम के कर्म से, प्रीति करें सब जीव।
सिद्ध प्रभु ने नाश कर, पाया प्रेम अतीव॥85॥

ॐ ह्रीं सुभग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर प्राणी ना प्रीति करें, अपने पास ना आय।
दुर्भग दुखमय कर्म हैं, सिद्ध प्रभु विनशाय॥86॥

ॐ ह्रीं दुर्भग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त सुरों की धुन मधुर, सुस्वर कण्ठ से गाय।
नाम कर्म की प्रकृति है, सिद्ध बने विनशाय॥87॥

ॐ ह्रीं सुस्वर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरस कर्कश वचन हो, श्रवण करे ना कोय।
दु:स्वर प्रकृति कर्म की, सिद्ध बने अघ खोय।।88।।

ॐ ह्रीं दु:स्वर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकर्षक तन कान्तिमय, बहुत मान्य हो जाय।
नाम कर्म आदेय है, सिद्ध बने विनशाय।।89।।

ॐ ह्रीं आदेय-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूखा तन कान्ति रहित, जग में मान्य ना होय।
नाम कर्म अनादेय है, सिद्ध बने अघ खोय।।90।।

ॐ ह्रीं अनादेय-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चहूँ ओर चर्चा चले, सुगुण होय न होय।
नाम कर्म यश कीर्ति है, सिद्ध बने अघ खोय।।91।।

ॐ ह्रीं यश-कीर्ति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कारज गुण सब श्रेष्ठ है, फिर भी नाम ना होए।
नाम अयश, कीर्ति कहा, सिद्ध बने अघ खोय।।92।।

ॐ ह्रीं अयश कीर्ति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मम श्रद्धा की बेदी पर प्रभु, चौबीसो जिनराज बसे।
नाम कर्म की पाप प्रकृतियाँ, धीरे धीरे सारी नशे।।
तीर्थंकर पद-नाम-कर्म जो, धर्म तीर्थ प्रवर्तन कर्ता।
जग में बाँधे अत: छोड़कर, सिद्ध बने सब अरिहन्ता।।93।।

ॐ ह्रीं परमोत्कृष्ट-अतिशय-सम्पन्न-समवशरण-विभूति-युक्त-धर्मतीर्थ प्रवर्तक-तीर्थंकर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

बीस कोड़ा कोड़ी सागर का, बंध महा कहलाता है।
आठ मुहूरत जघन्य बंध है, नाम करम कट जाता है॥
नाम कर्म के पूर्ण नाश से, गुण सुक्ष्मत्व प्रगटित होते।
सिद्धालय में जीव निराकुल, नामकर्म विरहित होते॥94॥

ॐ ह्रीं-नाम-कर्म-रहिताय सुक्ष्मत्व-गुण-सहिताय अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम वलय

दोहा- **ऊँची नीची जातियाँ, संसारी के होय।**
कर्म रहित सिद्धात्मा, जाति कुल ना कोय॥
(सप्तम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(गोत्र कर्मनाशक सिद्ध परमेष्ठी के 3 अर्घ्य)

जिन दीक्षा के योग्य आचरण, लोक पूज्य कुल में जन्में।
संतों की संगत करते वे, धर्म दयामय हो मन में।
सिद्ध प्रभु लोकाग्र विराजे, गोत्र कर्म का हनन किया।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, मोक्ष मार्ग पर गमन किया॥1॥

ॐ ह्रीं उच्च गोत्रकर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हीन कर्म है हीन वंश है, हीन भाव से हीन हुए।
हीन कुलों में आकर जन्मे, नीच गोत्री जलमीन हुए।
पर निंदा मद झूठा यश ले, नीच गोत्र का बंध करे।
सिद्ध प्रभुजी इसे नाशकर, गोत्र कर्म के द्वन्द हरे॥2॥

ॐ ह्रीं नीच गौत्र कर्म रहिताय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

गौत्र कर्म की जघन्य अवस्था, अन्तर्मुहूर्त कहलाती।
बीस कोड़ा कोड़ी सागर तक, जग में है भ्रमवाती।।
सिद्ध प्रभुजी इसे नाशकर, अगुरुलघुत्व गुण पाया है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, सिद्ध भक्ति मन भाया है।।3।।

ॐ ह्रीं गोत्र-कर्म-रहिताय-अगुरुलघुत्व-गुण-सहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलमीन-मछली को जल से, कितना भी धोए पर गंध नहीं। जाती उसी प्रकार हीन जाति के, जन्मगत संस्कार नहीं जाते।।

अष्टम वलय

श्रेष्ठ कार्य में विघ्न कर, अन्तराय है नाम।
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, पाने शिवपुर धाम।
(अष्टम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(अन्तराय कर्मनाशक सिद्ध परमेष्ठी के 6 अर्घ)

इच्छा है सामर्थ्य है, दान नहीं दे पाय।
क्षायिक दानी सिद्ध हैं, नाशा दानान्तराय।।1।।

ॐ ह्रीं दानान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राप्ति की है चाहना, मिलता नहीं पदार्थ।
लाभान्तराय को नाशकर, साधा निज परमार्थ।।2।।

ॐ ह्रीं लाभान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्न पान गंध वस्तुएँ, भोग नहीं कर पाय।
कर्म भोगान्तराय है, नाशे शिव पुर पाय।।3।।

ॐ ह्रीं भोगान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्त्राभूषण स्त्रियाँ, वाहन वस्तु अनेक।
विघ्न पड़े उपभोग में, नाशे कर्म जिनेश॥4॥

ॐ ह्रीं उपभोगान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शक्ति की अभिव्यक्ति ना, करता नेक उपाय।
उदय वीर्य अन्तराय है, रहित सिद्ध कहलाय॥5॥

ॐ ह्रीं वीर्यान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

शुभ कार्यों में बाधा डाले, वैभव लख ईर्ष्या करता।
निज हाथों से दान दया ना, धर्म द्रव्य भक्षण करता॥
शक्ति पाकर पर को दबाए, अन्तराय का बंधन है।
श्रेष्ठ कार्य के विघ्न नाश हो, सिद्ध शक्ति को वंदन है॥6॥

ॐ ह्रीं अन्तराय-कर्म-रहिताय अनन्तवीर्य-गुण-युक्ताय श्री-अनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्पूर्णार्घ्य

आठकर्म की सौ अड़तालीस, कर्म प्रकृतियाँ कहलातीं।
मिथ्या तजकर व्रत धारण कर, मुनिपने में छटजातीं॥
करूँ प्रार्थना जिनवर कैसे, दुक्खों का क्षय हो जावें।
करूँ साधना ध्यानाराधना, सर्व कर्म विनश जावें॥

ॐ ह्रीं शताष्टचत्वारिंशत्कर्म-प्रकृति-रहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने नमः सम्पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य-ॐ ह्रीं अष्ट कर्म रहिताय सिद्ध परमेष्ठिने नमः।

जयमाला

जय सिद्ध निरंजन निष्कामी, जय कर्म विजेता ध्रुव धामी।
जय ज्ञान दरश सुख शक्तिवान, जय शुद्ध निरामय कर्महान।।1।।

तेरे पावन पग पूज रहा, जिसके कारण महफूज़ रहा।
संसार सिंधु से पार करो, प्रभु मम जीवन उद्धार करो।।2।।

जीवन कितना है दुखित व्यथित, जब कर्म सताते हो उदित।
प्रभु! नरक निगोद में पड़ा रहा, निज आत्म बोध बिन गड़ा रहा।।3।।

कर्मों के बंधन थे अनन्त, स्वाभाविक क्षण में हुए शान्त।
झट गोद निगोद से निकल गया, पंचेन्द्रिय बनकर सँभल गया।।4।।

प्रभु! आप दरस का हो प्रभाव, मिथ्या दर्शन का हो अभाव।
प्रभु! चार कषाय विनश जावें, क्षायिक सम्यक् दर्शन पावे।।5।।

प्रभु! पंचम गुण स्थान चढ़ूँ, प्रभु! षष्ठम सप्तम ध्यान धरूँ।
प्रभु! त्याग भाव बढ़ता जाये, प्रभु! राग द्वेष घटता जाये।।6।।

मद मोह नहीं वैराग बढ़े, शत पाप प्रकृति का नाश करें।
कर्मों के खेल निराले हैं, सुख दुख के पूरे जाले हैं।।7।।

कर्मों से उन्नति अवनति है, कर्मों से मिलती सब गति है।
कर्मो से पाना खोना हैं, कर्मों का जीव खिलौना है।।8।।

वसु कर्म हमें भटकाते हैं, प्रभु पुजा से विनशाते हैं।
प्रभु ज्ञानावरण नशाया है, सर्वज्ञ-पने को पाया है।।9।।

प्रभु दर्शनावरण समाप्त किया, युगपत दोनों को प्राप्त किया।
जब कर्मवेदनी छटता है, अव्याबाधत्व प्रगटता है।।10।।

सम्यक्त्व शिखर सुख पाते हैं, जो मोह कर्म विनशाते हैं।
जो आयु कर्म खपाते हैं, अवगाहन गुण पा जाते हैं।।11।।

सुक्ष्मत्व महागुण प्रगट हुआ, जब नाम कर्म सब नष्ट हुआ।
जब ऊँच नीच के गोत्र हने, तब अगुरुलघुत्व के स्रोत बने॥12॥

महाशक्ति गुण पाया है, जब अन्तराय विनशाया हैं।
प्रभु आठ करम से मुक्त हुए, प्रभु आठ गुणों से युक्त हुए॥13॥

आतम में आनन्द बरस रहा, प्रभु दर्शन से मन सरस रहा।
शब्दों से भक्ति करी तेरी, मेटो भव भव की मम फेरी॥14॥

योजन पैंतालिस लक्ष कहा, कर्म भूमि अरूँ सिद्ध महा।
जो सिद्ध प्रभु को ध्याता है, वह स्वयंसिद्ध हो जाता है॥15॥

दोहा- स्वयं सिद्ध आलोक है, सिद्ध प्रभु गुणखान।
'सौरभ सागर' नित नमें, कर्म रहित भगवान।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-वीर्यत्व-सुक्ष्मत्व-अवगाहनत्व-अगुरुलघुत्व-अव्याबाधत्व-अष्टगुण-समन्वित-श्रीसिद्ध-परमेष्ठियो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाति वर्ण से उपर मानव, जाति एक सदा जानो।
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शुद्र तो, क्रिया कर्म से पहचानो॥
आदिनाथ के पुत्र भरत ने, कार्य योग्य समझा बाँटा।
मुनि धर्म तो तीनों पालें, जैन बने चौथा नाता॥

जैनाचार संहिता श्लोक नं. 45

सोते उठते प्रथम अन्त क्षण, महामंत्र णमोकार पढ़े।
जीव दया का भाव रहे नित, लघु दीर्घ सत्कार करे॥
दो क्षण आसन मौन विराजे, नित्य कृत्य को याद करे।
बुरा छोड़कर अच्छा जोड़े, जिनवर से फरियाद करे॥

जैनाचार संहिता श्लोक नं. 27

कर्मदहन व्रत विधान

व्रतारम्भ : किसी भी माह की द्वितीय, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, सप्तमी, नवमी, द्वादशी, चतुर्दशी से प्रारम्भ

अवधि : 4 वर्ष से 8 वर्ष

व्रत पूजा : कर्म दहन विधान एवं जिस कर्म के व्रत है उनकी पूजा आदि।

जाप : ॐ ह्रीं सर्व कर्म रहिताय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः (8 से लेकर 148 माला)

व्रत विधि : 148+8 उपवास या एकासन या 4 रस त्याग पूर्वक

- ज्ञानावरणी कर्म के पांच कर्म प्रकृति के नाश की भावना से पंचमी के पांच उपवास करें।
- दर्शनावरणी कर्म के नौ कर्म प्रकृति के नाश की भावना से नवमी के नौ उपवास करें।
- वेदनीय कर्म की दो कर्म प्रकृति के नाश की भावना से दूज के दो उपवास करें।
- मोहनीय कर्म की 28 प्रकृति के नाश की भावना से द्वादशी के 28 उपवास करें।
- आयु कर्म की 4 प्रकृति के नाश की भावना से चतुर्थी के चार उपवास करें।
- नाम कर्म की 93 प्रकृति के नाश की भावना से चतुर्दशी के 93 उपवास करें।
- गोत्र कर्म की 2 प्रकृति के नाश की भावना से सप्तमी के 2 उपवास करें।
- अन्तराय कर्म की 5 प्रकृति के नाश की भावना से तृतीया के 5 उपवास करें।
- तथा अष्ट गुणों की प्राप्ति हेतू अष्टमी के आठ उपवास करें।
- इस प्रकार 5+9+2+28+4+93+3+5+8=156 उपवास कर्म दहन व्रत के करने चाहिए।

प्रशस्ति

दुःखद काल था काल करोना, सुखद काल बनकर आया।
जंगल पर्वत गुरुवर मंदिर, शांत साधना मन भाया।।१।।
महामारी का रोग भयंकर, स्वारथ मय संसार लखा।
अपनों से अपनों की दूरी, मृत्यु का तांडव देखा।।२।।
जीवन की क्षण भंगुरता जाना, औषध धन सब पड़े रहे।
लोगों से ना मिलते जुलते, डॉक्टर वैध भी खड़े रहे।।३।।
सामूहिक पापोदय का यह, अद्भुत दृश्य दिखाया है।
संबंधी कई मरे घरो में, आग लगा ना पाया है।।४।।
मुख पट्टी बांधे सब घूमें, हर क्षण हाथों को धोते।
शोक व्यसन व्यापार मित्रता, छोड़ घरों में डर सोते।।५।।
दुख के क्षण में परमातम तो, याद बहुत ही आते हैं।
घर में बैठे जैनी जन तो, शांतिधारा कराते है।।६।।
कम खर्चे में काम चलाते, छींक छूत था भयकारी।
नाम करोना सूक्ष्म जीव का, था आतंक बड़ा भारी।।७।।
पुण्योदय से गुरु कृपा की, छांव तले जीवन बीता।
पार्श्वनाथ की महिमा न्यारी, ज्ञान ध्यान अमृत पीता।।८।।
दुखियों का दुख देख जानकर, कर्मोदय का भान हुआ।
कैसे काँटे कर्म श्रंखला, और अधिक निज ध्यान किया।।९।।
फुर्सत के क्षण कर्म दहन की, गाथा गायन में लिखता।
कर्म बंध का छेदन होवे, भक्ति भाव सदा रहता।।१०।।
सन इक्कीस में पूर्ण किया अरु, सामूहिक विधान किया।
पुष्पगिरी में त्रय विधान की, रचना का बहुगान हुआ।।११।।
यह कर्म महा दुखदाई है, इसे धर्म कार्य से नित काटो।
सौरभ सागर कहे सभी से, समताधर संयम बाटों।।१२।।

श्री लघु चौबीसी पूजन (विधान)

स्थापना

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमतिनाथ स्वामी गुणखान।
पद्म सुपारस चन्दा प्रभु जी, पुष्पदन्त जिन कर लूँ ध्यान।।
हे शीतल प्रभु शीतल करदो, श्रेयनाथ जिन हृदय विशाल।
वासुपूज्य पद बाल ब्रह्म हैं, विमल अनन्त धरम जयमाल।।
शान्ति कुन्थु अर मल्लि जिनेश्वर, मुनिसुव्रत व्रत पाऊँगा।
नमिनाथ नम नेमि शरण पा, पारस वीर को ध्याऊँगा।।
चौबीसों जिनराज हमारे, आज पुकारूँ करुणा धार।
अत्र पधारो हृदय विराजो, कर्म खपाओ हे अविकार।।
तीर्थंकर हे धर्म शिरोमणि, कर्म नाश भव पार करो।
भक्ति भाव से पूजा करता, मम विनती स्वीकार करो।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति तीर्थंकर! अत्र अवतर अवतर संवोषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

जग की ज्वाला में जल जल कर, जीवन व्यर्थ गवाया है।
जल की धारा चरण कमल दें, जन्म जरा विनशाया है।।
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, जलधारा स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

चन्दन चुटकी ले आया प्रभु, वन्दन भाव जगा करके।
शीतल सुरभित मन हो जाए, पूजा पाठ रचा करके।।
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, चन्दन यह स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि महावीरपर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

उज्ज्वल तन्दुल भाव मृदुल कर, श्री जिन सम्मुख ले आऊँ।
अक्षय निधी अक्षय संयम धर, सिद्धालय को पा जाऊँ।।
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, अक्षत यह स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अक्षय-पदप्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

हृदय कमल कोमल करुणामय, काम बाण से रहित करो।
इन्द्रिय भोग तजूँ मैं जिनवर, ब्रह्मभाव को उदित करो।।
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, पुष्पाञ्जलि स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

इच्छाओं को दूर भगाया, नित उपवास किया करते।
क्षुधा वेदिनी नाश करन को, अन्नपान तजा करते।।
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, नैवेद्यम् स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

मिथ्यातम में फँसा रहा पर, अन्तर दीप न जल पाया।
तेरी अनुपम दिव्य ज्योति से, अन्तर मन उज्ज्वल छाया।।
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, जगमग दीप स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

दीक्षा लेकर महा तपस्या, करते चौबीसों मुनिराज।
योग साधना निजानन्दमय, अद्‌भुत अनुभूति निजसाध।।
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, धूपं यह स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

तरुवर फल तन पुष्ट करावें, बाहर बढ़ता फलता है।
अन्तर मन का मोक्ष महाफल, भक्ति ध्यान से मिलता है।।
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, श्रद्धा फल स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्ष-महाफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

ऋजु भावों का शुभ जल लेकर, समता का चन्दन लाया।
ध्यान अवस्था के अक्षत ले, भक्ति पुष्प मन खिलवाया।।
चाहत की नैवेद्य चढ़ाकर, श्रद्धा दीप जलाऊँगा।
अष्ट मदों की धूप समर्पित, निराकार फल पाऊँगा।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ बनाकर, चरणों में अर्पित करता।
चौबीसी की पूजा करके, अन्तर मन हर्षित होता।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक

(चौपाई)

सोलह कारण भावना भाई, दया धर्म मन में प्रकटाई।
सोलह स्वप्न शगुन दर्शाता, पन्द्रह माह रतन बरसाता।।

तीर्थंकर का एक ही क्रम है, नाहीं संशय ना विभ्रम है।
गर्भ विषे जो जीव पला है, तीर्थंकर जग जीव भला है॥1॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो गर्भ-मंगल-मण्डिताय मम-गर्भ-दोष-विनाशनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट देवीयाँ मंगल गाये, माता की सेवा चित लाये।
जन्म हुआ प्रभु का धरती पर, सुख शान्ति त्रय लोक में क्षणभर॥
देव इन्द्र सौधर्म भी आये, पाण्डुक वन अभिषेक कराये।
चिह्न लखा अरुँ नाम पुकारा, जन्म कल्याणक अति सुख कारा॥2॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जन्ममंगल-मण्डिताय मम-जन्मरोग-विनाशनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगति के इन्द्रिय सुखभोगे, राज काज सब नित अवलोके।
पूर्व जन्म की यादें आई, या घटना ने भाव जगाई॥
लौकान्तिक सब देव भी आए, मनहर शिविका में बिठलाएँ।
छोड़ दिया नश्वर संसारा, भेष दिगम्बर अनुपम धारा॥3॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो तपोमंगल-मण्डिताय मम-चारित्र-वर्धनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्षों जंगल में तप कीना, कभी कभी आहार है लीना।
धर्म गृहस्थी या संन्यासी, पथ दोनों दे तप अभ्यासी॥
पद्मासन खड्गासन रहते, परिषहों को हर क्षण सहते।
शुक्ल ध्यान चउ कर्म नशाया, केवलज्ञान कल्याण मनाया॥4॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो केवलज्ञान-मण्डिताय मम-कुज्ञान-विनाशनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रय योगों से मुक्त हुए हो, ध्यान अवस्था युक्त हुए हो।
सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति ध्याना, व्युपरत किरिया अरि सब हाना॥
अ-इ-उ-ऋ-लृ लघु शब्दा, कर्म जला तत्क्षण प्रभु सिद्धा।
निराकार चैतन्य प्रकाशी, चरण नमें पाने सुख राशि॥5॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्षमंगल-मण्डिताय मम-सर्व-कर्म विध्वंसनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसी अर्घावली

श्री आदिनाथ भगवान का अर्घ्य

आदिनाथ प्रथमेश जिन, धर्म कर्म दातार।
भव वारिधी से पार कर, मेटो मम संसार।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अजितनाथ भगवान का अर्घ्य

धर्मधुरा धारी प्रभु, धर्म बढ़ावें रोज।
अजितनाथ भगवान के बन्दूँ चरण सरोज।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री संभवनाथ भगवान का अर्घ्य

संभव सम भव अन्त हो, पाऊँ सिद्ध स्वभाव।
भावों में समभाव हो, तजूँ विकारी भाव।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अभिनन्दननाथ भगवान का अर्घ्य

अभिनन्दन वन्दन करूँ, क्रन्दन कर्म नशाय।
जग बन्धन को तोड़कर, सिद्धालय को पाय।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुमतिनाथ भगवान का अर्घ्य

मिथ्यावाद को दूर कर, स्याद्वाद प्रगटाय।
दुर्बुद्धि दुर्ध्यान तज, सुमतिनाथ शिर नाय।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पद्मप्रभ भगवान का अर्घ्य

पद्मासन बैठे प्रभू, आतम पद्म खिलाय।
पद्म खिले निज ध्यान का, पद्म प्रभु सिर नाय।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुपार्श्वनाथ भगवान का अर्घ्य

वीतराग निज ज्ञान में, झलके तीनों लोक।
तत्व प्रकाशक महामुनि, चरण सुपारस धोक।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्द्रप्रभु भगवान का अर्घ्य

अखिलेश्वर हे महाव्रती, तीर्थ प्रवर्तक आप।
धवल वर्ण तन आत्मा, चन्द्र प्रभु निष्पाप।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पुष्पदन्त भगवान का अर्घ्य

भव भंजक भगवान हैं, पुष्पदंत शुभ नाम।
मगर चिह्न तन श्वेत है, शत शत करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शीतलनाथ भगवान का अर्घ्य

धर्मामृत का दान दे, शीतल शिवपद पाय।
मम आतम शीतल करे, छोड़े विषय कषाय।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री श्रेयांसनाथ भगवान का अर्घ्य

जय जय श्रेयांशम तव गुण पासं, कर्म विनाशं भक्ति करम्।
पावन पद बन्दों जय जिन चन्दों, कृपा करिंदो शान्ति प्रदम्।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वासुपूज्य भगवान का अर्घ्य

पाँचों कल्याणक महा, चम्पापुर में पाय।
बाल ब्रह्मचारी प्रथम, वासुपूज्य जिनराय।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विमलनाथ भगवान का अर्घ्य

बाहर भीतर स्वच्छता, विमल अमल गुणवन्त।
अर्घ चढ़ाकर पूजता, पाने पद अरहन्त।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अनन्तनाथ भगवान का अर्घ्य

सुख अनन्त पाया प्रभु, कर कर कर्मन अन्त।
अर्घ चढ़ा वन्दन करूँ, अनन्तनाथ भगवन्त।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री धर्मनाथ भगवान का अर्घ्य

ध्वनि सुनि ध्रुवधाम की, धैर्य धर्म प्रगटाय।
ध्याता बन निज ध्येय को, धर्मनाथ सम ध्याय।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शांतिनाथ भगवान का अर्घ्य

जय त्रिभुवन नायक आतम ज्ञायक, कर्म विनाशक शान्ति नमो।
जय शिवपुरवासी ज्ञान प्रकाशी, धर्म विकासी शान्ति नमों।।

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री कुंथुनाथ भगवान का अर्घ्य

कर्म जहर निज आत्मा, मरण देय भटकाय।
भक्ति कुन्थुनाथ की, सर्व जहर विनशाय।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अरहनाथ भगवान का अर्घ्य

दर्पण में मुख रूप लख, भूला आत्म स्वरूप।
अरहनाथ सर्व दर्प हर, पाया चिन्मय रूप।।

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मल्लिनाथ भगवान का अर्घ्य

हे लेश्या तीता भव्या मीता, परम पुनीता मल्लि जिनेश।
जय आत्म विहारी बाल ब्रह्मचारी, आरती उतारी भक्ति विशेष।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान का अर्घ्य

शत इन्द्रों ने भक्ति कर, नाशा भव भटकाव।
मुनिसुव्रत की अर्चना, देवे निज स्वभाव॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नमिनाथ भगवान का अर्घ्य

नमिनाथ नमता रहूँ, नम्र भाव मन धार।
अहंकार सब मेट कर, धारूँ शुद्ध विचार॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नेमिनाथ भगवान का अर्घ्य

पशु बन्धन को देखकर, धार लिया वैराग्य।
सर्वदर्शी नेमी प्रभु, नमन जगावे भाग्य॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पार्श्वनाथ भगवान का अर्घ्य

क्षायिक नव लब्धि महा, योग निरोध कर पाय।
पार्श्व प्रभु की वन्दना, पाऊँ निज स्वभाव॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री महावीर स्वामी का अर्घ्य

शासन नायक वीर जिन, अनेकान्त सरताज।
समवशरण सन्देश दे, पाया मुक्ति राज॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मंशापूर्ण महावीर स्वामी का अर्घ्य

श्रद्धा का जल कर में लेकर भक्ति का चन्दन लाया।
अक्षत कुसुम चरुवर पावन दीप धूप वन्दन भाया॥
सिद्ध शिला फल चाह लिये प्रभु आठों द्रव्य चढ़ाऊँगा।
श्री मंशापूरण महावीर की पूजा कर सुख पाऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्री मंशापूर्ण महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

आदि जिनेश्वर जग हितकारी, अजित नाथ जित कर्म विकारी।
संभव भव का नाश किया है, अभिनन्दन जग जान लिया है॥
सुमतिनाथ सन्मार्ग प्रदाता, पद्म प्रभु जी जग विख्याता।
नाथ सुपारस जय हो तेरी, चन्द्रप्रभु काटो भव फेरी॥
पुष्पदन्त श्री जिनवर नामा, शीतल शीतलता ध्रुव धामा।
श्रेयनाथ गुण दया निधाना, वासुपूज्य पूजित अविरामा॥
विमलनाथ निर्मलता धारी, है अनन्त अक्षय सुखकारी।
धर्मनाथ जिन धर्म बढ़ावें, शान्तिनाथ मन शान्त करावें॥
कुन्थुनाथ जी काम विजेता, अरहनाथ त्रिपद के नेता।
मल्लिनाथ सब शल्य मिटावें, मुनिसुव्रत व्रत में तिष्ठावें॥
नमिनाथ को नमन हमारी, नेमिनाथ दुख संकटहारी।
पारसनाथ सदा ही ध्याऊँ, महावीर पद शीश नवाऊँ॥

दोहा

चौबीसों के चरण में, वन्दन बारम्बार।
"सौरभ सागर" नित नमें, भक्तिभाव उरधार॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूणार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य- ॐ ह्रीं वृषभादि वीराय नमः।

त्रिकाल चौबीसी प्रत्येक अर्घ

त्रिकालिक प्रथम तीर्थंकर

धर्म प्रवर्तक <u>आदिनाथ</u> जी, चिन्मय मूरत प्रथम जिनेश।
तीर्थंकर <u>निर्वाण</u> भूत के, प्रारंभिक ज्ञायक अखिलेश॥
आने वाले <u>महापद्म</u> जी, धर्म ध्वजा फहरायेगें।
भूत भविष्यत वर्तमान के, प्रथम तीर्थंकर ध्यायेंगे॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ निर्वाण महापद्म त्रिकालिक तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक द्वितीय तीर्थंकर

कर्म विजेता अजितनाथ जी, गज चिन्हाकिंत द्वितीय जिनेश।
सागर से गंभीर भूत के, तीर्थंकर है अपर महेश।।
नर सुर सेवित भावी जिनवर, श्री सुरदेव सदा सुखकार।
भूत भविष्यत वर्तमान के, त्रय तीर्थंकर जय जयकार।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ, श्री सागर, श्री सुरदेव त्रिकालिक तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक तृतीय तीर्थंकर

जग में संभव सब कुछ है जब, संभवनाथ कृपा बरसे।
महासाधु सा जीवन जीकर, ध्यान मग्न जीवन हरसे।।
आने वाले तीर्थंकर श्री, सुपार्श्वनाथ[1] कल्याण करें।
भूत भविष्यत वर्तमान के, त्रय तीर्थंकर ध्यान धरें।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथ, महासाधु, सुपार्श्वनाथ त्रिकालिक तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक चतुर्थ तीर्थंकर

मन मर्कट सा मचल रहा हो, अभिनंदन का जाप करें।
विमलप्रभ सा निर्मल मन कर, जीवन के संताप हरें।।
तीर्थंकर श्री स्वयंप्रभ सम, स्वयं प्रभा प्रगटाऊंगा।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर गुण गाऊंगा।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदन, विमलप्रभ, श्री स्वयं प्रभ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–तृतीय तीर्थंकर का सुरिप्रभ नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक पंचम तीर्थंकर

सुमतिनाथ मति पाने को मन, सुमन सुमन ले नमन किया।
श्री श्रीधर[1] सम शुद्ध आत्म कर, सिद्धालय में गमन किया॥
सर्वात्मभूत जिन देव पांचवे, होने वाले तीर्थंकर।
भूत भविष्यत वर्तमान के, पूजूँ तीनों तीर्थंकर॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ, श्रीधर, सर्वात्मभूत तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक षष्टम तीर्थंकर

खिला कमल सा चिन्ह आपका, पद्मप्रभु पावन भगवान।
सुदत्तनाथ के समवशरण में, दिव्य ध्वनि खिरती अविराम॥
तीर्थंकर श्री देवपुत्र[2] जी, होवेंगें पुण्यार्थ नमूं।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थ प्रवर्तक सदा नमूं॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु, सुदत्तनाथ, देवपुत्र तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक सप्तम तीर्थंकर

स्वयं बोध स्वास्तिक से होता, नाथ सुपार्श्व का लांक्षन है।
कर्म रहित श्री अमलप्रभ[3] जी, सिद्धालय सुख हर क्षण हैं॥
कुल कीर्ति को बर्धित करने, वाले हैं कुलपुत्र[4] मुनि।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थ प्रवर्तक त्रयों मुनि॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ, अमलप्रभ, कुलपुत्र नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–पंचम तीर्थंकर सर्वदुध नाम का भी उल्लेख है।
2. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–षष्टम तीर्थंकर जयदेव जी नाम का भी उल्लेख है।
3. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–सप्तम तीर्थंकर का सदल नाम का भी उल्लेख है।
4. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–सप्तम तीर्थंकर का उदयदेव जी का भी उल्लेख है।
   भूतकालीन तीर्थंकरः–नवम तीर्थंकर का आडिट नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक अष्टम तीर्थंकर

चंद्रमणि सम चंद्रकांति मय, चंद्रप्रभु जिनराज महान।
उद्धर जिन उद्धार कराते, सिद्धालय में ज्योतिर्मान।।
उदंकनाथ भावी तीर्थंकर, चरण वंदना नित्य करूं।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर का ध्यान करूं।।

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभु, उद्धर जिन, उदंक देव तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक नवम् तीर्थंकर

भव भय भंजक पुष्पदंत प्रभु, भवोदधि के तारणहार।
भूतकाल के अंगिर जिनवर, पूजूं कर्मन नाशन हार।।
प्रोष्ठिल[1] है भावी तीर्थंकर, पायेंगे आगे निर्वाण।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर पूजूँ धर ध्यान।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्त, अंगिर, प्रोष्ठिल तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक दशम तीर्थंकर

सुखदायक कल्याणक पाया, शीतल स्वामी तप करके।
भूतकाल के सन्मति देवा[2], सद्गति देवे भव हरके।।
जयकीर्ति जिनधर्म बढ़ाने, होंगे दशवें तीर्थंकर।
भूत भविष्यत वर्तमान के, पूजूं कर्म रहित जिनवर।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ, सन्मति देव, जयकीर्ति तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–नवम तीर्थंकर का प्रश्नकीर्ति जी का भी उल्लेख है।
2. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–दशम तीर्थंकर का अग्निनाथ नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक ग्यारहवें तीर्थंकर

घाति कर्म विनाशक जिनवर, नाम श्रेयांश है मंगलकार।
सिंधु[1] जिनवर बंदू अघहर, भव ध्वंसि गुण अपरंपार।।
पूर्ण बुद्ध हो मुनिसुव्रत[2] जी, नामधारी भावी जिनराज।
भूत भविष्यत वर्तमान जिन, पूजू निजानंद ध्रुवराज।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांश नाथ, सिंधुनाथ, मुनिसुव्रत नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक बारहवें तीर्थंकर

वासुपूज्य ब्रह्मचारी जिनवर, सिद्धालय में रहे विराज।
कुसुमांजलि तीर्थंकर पूजूँ, भूतकाल के हे जिनराज।।
निष्कामी अर[3] अमल जिनेश्वर, नित्य सुखाश्रित बसते है।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थ प्रवर्तक कहते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य, कुसुमंजलि, अरनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक तेरहवें तीर्थंकर

विमल भाव ले विमलनाथ के, विमल गुणों का गान करें।
शिवगण नायक आतम ज्ञायक, जिनवर का सम्मान करें।।
कर्म रहित निष्पाप नाम के, भावी तीर्थंकर जय कार।
भूत भविष्यत वर्तमान के, धर्म शिरोमणि जग हितकार।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ, शिवगणनाथ, निष्पाप नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–ग्यारहवें तीर्थंकर का सयंम नाम का भी उल्लेख है।
2. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–ग्यारहवें तीर्थंकर का पूर्णबुद्ध नाम का भी उल्लेख है।
3. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–बारहवें तीर्थंकर का अरअहम नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक चौदहवें तीर्थंकर

जय भगवंतं नाथ अनंतम, पार किये चौदह गुणथान।
राग द्वेष मद मोह विनाशी, तीर्थंकर उत्साह[1] महान।।
निष्कषाय[2] भावी तीर्थंकर, स्वयं स्वयंभू कहलाए।
भूत भविष्यत वर्तमान के, त्रैकालिक तीर्थंकर ध्याय।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ, उत्साह नाथ, निष्कषाय नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक पंद्रहवे तीर्थंकर

वस्तु का स्वभाव धर्म है, धर्मनाथ की वाणी है।
ज्ञानेश्वर[3] तीर्थंकर का शुभ, नाम आत्म कल्याणी है।।
विपुल[4] तपस्या विमल भाव से, भावी तीर्थंकर करते।
भूत भविष्यत वर्तमान के, हितकारी जिनवर भजते।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ, ज्ञानेश्वर नाथ, विपुलनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक सोलहवें तीर्थंकर

समरस भावों से समता रख, शान्तिनाथ जिनवर ध्याते।
परमेश्वर[5] के परम पदों में, प्रतिदिन नमनान्जलि लाते।।
निर्मल नाथ है भावी भगवन, निर्मलता दे जायेंगे।
भूत भविष्यत वर्तमान के, जिनवर अर्घ चढ़ायेंगे।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ, परमेश्वर नाथ, निर्मलनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–चौदहवें तीर्थंकर का उत्सव नाम का भी उल्लेख है।
2. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–चौदहवें तीर्थंकर का स्वयंभू नाम का भी उल्लेख है।
3. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–पन्द्रहवें तीर्थंकर का यशोधरा नाम का भी उल्लेख है।
4. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–पन्द्रहवें तीर्थंकर का विमलप्रभ नाम का भी उल्लेख है।
5. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–सोलहवें तीर्थंकर का बदल नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक सत्रहवें तीर्थंकर

जग की क्षण भंगुरता जाना, कुंथुनाथ जग छोड़ गए।
विमलेश्वर[1] वैराग्य धारकर, जगती से मुख मोड़ गये।।
चित्रगुप्त न जीवन लिखते, ये भावी तीर्थंकर है।
भूत भविष्यत वर्तमान के, जिनवर अर्घ समर्पण है।।

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ, विमलेश्वर, चित्रगुप्त नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक अठारहवें तीर्थंकर

मछली सा चंचल यौवन है, अरहनाथ जी जान गए।
नाथ यशोधर तीर्थंकर है, जीवन को पहचान गए।।
समाधि गुप्त भावी तीर्थंकर, सन्यासी महिमा गाए।
भूत भविष्यत वर्तमान के, धर्म प्रवर्तक गुण गाये।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथ, वर्धमान नाथ, समाधीगुप्त तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक उन्नीसवे तीर्थंकर

कलश चिन्हधारी प्रभुवर जी, मल्लिनाथ सब क्लेश हरें।
कृष्णमती के समवशरण में, भव्य जीव प्रवेश करें।।
स्वयं स्वयंभू नाथ हितैषी, भावी श्री भगवान बने।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर को सदा नमै।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ, कृष्णमती, स्वयंभूनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भूतकालीन तीर्थंकर:**–सत्रहवें तीर्थंकर का विनयेश्वर नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक बीसवे तीर्थंकर

मुनियों का व्रत मुनीसुव्रत ले, मुनियो के मुनि नाथ बने।
ज्ञानमती केवल ज्ञानी जिन, समवशरण सुरनाथ नमें।।
अनिवर्तक शुभ धर्म प्रवर्तक, भावी तीर्थंकर ध्याये।
भूत भविष्यत वर्तमान के, समवशरण धारी ध्याये।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रत नाथ, ज्ञानमती, अनिवर्तक नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक इक्कीसवे तीर्थंकर

विश्व विलोकी अरिकुल नाशक, नमिनाथ जय भगवंता।
शुद्धमति तीर्थंकर हितकर, नमूं नमूं जय अरिहंता।।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, गुण धारी जयनाथ बने।
भूत भविष्यत वर्तमान के, धर्म धुरंधर चरण नमैं।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ, शुद्धमती, जयनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक बाईसवें तीर्थंकर

बाल ब्रह्मचारी तीर्थंकर, नेमिनाथ गिरनार चढ़े।
भूतकाल के भद्रनाथ जी, शुद्ध भाव धर मोक्ष चढ़े।।
विमलनाथ भावी तीर्थंकर, विमल भाव से पूजेंगे।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर को पूजेंगे।।

ॐ ह्रीं श्री नेमीनाथ, भद्रनाथ, विमलनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक तेईसवे तीर्थंकर

पारस ने उपसर्ग सहा था, केवल ज्ञान मिला उपहार।
अतिक्रांत[1] जी है अतीत के, दीन दयालु धर्माधार।।
देवपाल देवाधिदेव जी, तीर्थंकर है दीनदयाल।
भूत भविष्यत वर्तमान को, अर्घ चढ़ाऊं भर भर थाल।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ, अतिक्रांत नाथ, देवपाल तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक चौबीसवें तीर्थंकर

वर्तमान के वर्धमान जिन, शासन नायक तारणहार।
शांतिनाथ[2] जी देव हमारे, भूतकाल के करुणा धार।।
अनंतवीर्य जी तीर्थंकर पर, भावी काल में होवेंगे।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर को पूजेंगे।।

ॐ ह्रीं श्री वर्धमान, शान्तियुक्त नाथ, अनंतवीर्य तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भविष्य कालीन तीर्थंकर:**–तेईसवें तीर्थंकर का अनंतवीर नाम का भी उल्लेख है।
2. **भूतकालीन तीर्थंकर:**–चौबीसवें तीर्थंकर का शांतास् नाम का भी उल्लेख है।

अर्घ्यावली

समुच्चय अर्घ

अष्ट द्रव्य का अर्घ थाल लें, श्रद्धा से अर्पित करता।
है अनर्घ पद पावन तेरा, पाने मन उलसित होता।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह अनर्घ्य पद प्राप्ताय **अर्घम्** निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसी अर्घ्य

ऋजु भावों का शुभ जल लेकर, समता का चन्दन लाया।
ध्यान अवस्था के अक्षत ले, भक्ति पुष्प मन खिलवाया।।
चाहत की नैवेद्य चढ़ाकर, श्रद्धा दीप जलाऊँगा।
अष्ट मदों की धूप समर्पित, निराकार फल पाऊँगा।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ बनाकर, चरणों में अर्पित करता।
चौबीसी की पूजा करके, अन्तर मन हर्षित होता।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीस तीर्थंकर की अर्घावली

(चौबीस तीर्थंकर की अर्घावली पृष्ठ नं. 62 पर देखें)

चौबीस निर्वाण भूमि अर्घ्य

तीरथ है सम्मेद शिखर जी, बीस पधारे श्री निर्वाण।
आदिनाथ कैलाशगिरी से, वासुपूज्य चम्पापुर धाम।।
नेमिनाथ गिरनार शिखर से, निराकार पद पाया है।
पावापुर महावीर प्रभु ने, आठों कर्म नशाया है।।
तीर्थंकर चौबीसो जिनवर, परम धाम को पाये हैं।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाकर श्रद्धा शीश झुकाये हैं।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाणस्थली श्रीसम्मेदशिखर-गिरनार-कैलाशगिरि चम्पापुर-पावापुर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूत काल चौबीस तीर्थंकर अर्घ

निर्वाण सागर महासाधु जी, विमल प्रभु गुण गान करें।
धर्म प्रवर्तक श्रीधर जिनवर, नाथ सुदत्त सुध्यान करें॥
अमल प्रभु जी उद्धर अंगिर, सन्मति का जयघोष करें।
सिंधु कुसमाँजलि शिवगण मुनि, तीर्थंकर उत्साह भरे॥
ज्ञानेश्वर परमेश्वर जिनवर, विमलेश्वर यशोधर शुभ नाम।
कृष्ण ज्ञान अरु शुद्धमति जिन, भद्रअति शान्ति सुख धाम॥
सिद्धालय में अमल अचल जिन, शाश्वत आनंद पाये है।
भूतकाल के चौबीस जिनवर, पूरण अर्घ चढ़ायें है॥

ॐ ह्रीं श्री निर्वाण आदि शांति पर्यन्त भूतकाल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः अर्घम् निर्वपामिति स्वाहा।

भविष्य काल चौबीस तीर्थंकर अर्घ

महापदम् सुरदेव सुपारस, स्वयं प्रभु सर्वात्म जिनेश।
देव पुत्र कुल उदंक नाथ जिन, प्रोष्ठिल जयकीर्ति जी विशेष॥
मुनिसुव्रत अरनाथ नमूँ मैं, पूजूं श्री निष्पाप कषाय।
ध्याऊ नाथ विपुल निर्मल जिन, चित्र समाधि गुप्त कहाय॥
नाथ स्वयंभू अनिवर्तक जय, विमल नाथ जयपाल जपूँ।
अनंतवीर्य जी अंतिम जिनवर, भावी तीर्थंकर पुजूँ॥
तीर्थंकर बन कर्म नशाये, जगति का कल्याण करें।
अर्घ चढ़ाऊ भावी जिनवर, सौरभ पा उत्थान करें॥

ॐ ह्रीं श्री महापद्मआदि अनंतवीर्य पर्यंत भविष्य काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः अर्घम् निर्वपामिति स्वाहा।

वर्तमान चौबीस तीर्थंकर अर्घ

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमतिनाथ स्वामी गुणखान।
पद्म सुपारस चन्दा प्रभु जी, पुष्पदन्त जिन कर लूँ ध्यान॥

हे शीतल प्रभु शीतल करदों, श्रेयनाथ जिन हृदय विशाल।
वासुपूज्य पद बाल ब्रह्म हैं, विमल अनन्त धरम जयमाल॥
शान्ति कुन्थु अर मल्लि जिनेश्वर, मुनिसुव्रत व्रत पाऊँगा।
नमिनाथ नम नेमि शरण पा, पारस वीर को ध्याऊँगा॥
तीर्थंकर है धर्म शिरोमणि, कर्म नाश भव पार करो।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाऊ, मम विनती स्वीकार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि महावीरपर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः अर्धम् निर्वपामिति स्वाहा।

माँ जिनवाणी अर्घ

दिव्य ध्वनि का निर्मल जल ले, तत्वों का चन्दन लाया।
अंग पूर्व का अक्षत लेकर, धर्म पुष्प मन खिलवाया॥
नय निक्षेप का नेवज लेकर, गुणस्थान का दीप जला।
अष्ट कर्म का धूम उड़ाया, निराकार फल मोक्ष मिला॥
चारों अनुयोगों से पूरित, जिन आगम को जान रहे।
अष्ट द्रव्य मय अर्ध्य चढ़ाकर, जिनवाणी सम्मान करें॥

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायैः अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन कम नौ करोड़ मुनिराजों का अर्घ्य

तीन घटाकर नौ करोड़ की, संख्या मुनिवर की जानो।
धरती पर जीवन्त जिनेश्वर, उन पर श्रद्धा हित मानो॥
तपसी जल से भिन्न कमल वत्, जीवन अपना जीते हैं।
ढाई द्वीप के मुनिराज को, अर्घ समर्पित करते हैं॥3॥

ॐ ह्रीं अढाईद्वीप-मध्ये-तीन-कम-नौ-करोड़-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ-गणाचार्य श्री पुष्पदंत सागर जी

अरमानों की थाली जोयी, नयनों में जल भर लाया।
सुनहिल भावों की केशर ले, शब्द पुष्प तन्दुल लाया।।
तन नैवेद्य बना मन दीपक, मद यौवन की धूप बना।
तव पद में अर्पित सिर फल, पूजन का यह अर्घ बना।

दोहा

तन मन धन अर्पण किया, रहा न कुछ भी शेष।
अष्ट द्रव्य से पूज कर, पाऊँ जिनका भेष।।

ॐ ह्रूं श्री 108 गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-जी-महाराज-अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपमीति स्वाहा।

अर्घ-आचार्य श्री सौरभ सागर जी

जल से घुलते कर्म हमारे, चन्दन से मिलती शीतलता।
पुंज चढ़े जब गुरु चरणों, में पुष्प सुगन्धित है देता।।
नैवेद्य चढ़ाकर क्षुधा नशाऊँ, निज ज्ञान का दीप जलाऊँ मैं।
धूप चढ़ाकर कर्म जलाऊँ, फल से मोक्ष फल पाऊँ मैं।।
आठों द्रव्यों को एक मिलाकर, गुरुवर के गुण गाऊँ मैं।
भव भव के सब पाप नशे, अरिहंत अवस्था पाऊँ मैं।।

ॐ ह्रूं संस्कार प्रणेता ज्ञानयोगी आचार्यश्री सौरभ सागर जी गुरुदेव चरणेभ्यो अन्घर्य पद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय महार्घ्य

(गीता छंद)

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूँ सिद्ध पूजूँ चावसों।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ साधु पूजूँ भावसों।।1।।
अर्हन्त भाषित बैन पूजूँ द्वादशांग रचे गणी।
पूजूँ दिगम्बर-गुरुचरण शिव हेतु सब आशा हनी।।2।।

सर्वज्ञ भाषित धर्म-दशविधि दया-मय पूजूँ सदा।
जजुँ भावना षोडश-रत्नत्रय जा बिना शिव नहिं कदा।।3।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्य-चैत्यालय जजूँ।
पन मेरु नंदीश्वर, जिनालय खचर, सुर, पूजित भजूँ।।4।।
कैलाश श्री सम्मेद श्री गिरनार गिरि पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा।।5।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस वसु जपि होय पति शिवगेह के।।6।।

दोहा

जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूजहूँ, बहुविधि भक्ति बढ़ाय।।7।।

ॐ ह्रीं भावपूजा भाववंदना त्रिकालपूजा त्रिकालवंदना करे करावे भावना भावे श्री अरहंतजी सिद्धजी आचार्यजी उपाध्यायजी सर्वसाधुजी पंच परमेष्ठिभ्यो नमः, प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यनुयोगेभ्यो नमः, दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्यो नमः, उत्तमक्षमादि दशलाक्षणिकधर्मेभ्यो नमः, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः, जल के विषैं थल के विषैं आकाश के विषैं गुफा के विषैं पहाड़ के विषैं नगर नगरी विषैं ऊर्ध्वलोक मध्यलोक पाताललोक विषैं विराजमान कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालय जिनबिम्बेभ्यो नमः। विदेहक्षेत्रे विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो नमः, पाँच भरत पाँच ऐरावत दशक्षेत्र संबंधी तीस चौबीसी के सातसौ बीस जिनराजेभ्यो नमः, नन्दीश्वरद्वीप संबंधी बावन जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः, पंचमेरुसंबंधी अस्सी जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो नमः, सम्मेदशिखर कैलाश चंपापुर पावापुर गिरनार सोनागिर मथुरा तारंगा आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः, जैनबद्री मूडबिद्री देवगढ़ चन्देरी पपौरा हस्तिनापुर अयोध्या राजगृही चमत्कार जी श्रीमहावीरजी पद्मपुरी तिजारा बड़ागाँव पुष्पगिरी, सौरभांचल पार्श्वनाथ, मंशापूर्ण महावीर आदि अतिशयक्षेत्रेभ्यो नमः, श्री चारणऋद्धिधारी सप्तपरमर्षिभ्यो नमः, ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवन्तं कृपावन्तं श्रीवृषभादि महावीरपर्यन्तं चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षत्रे आर्यखंडे.....नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे..... मासे.....शुभे.....पक्षे शुभ.....तिथौ..... .....वासरे मुनि आर्यिकानां श्रावक श्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं (जलधारा) अनर्घ्यपद प्राप्तये महार्घ्यं सम्पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांति पाठ (हिन्दी)

शांतिनाथ! मुख शशि उनहारी, शील गुण व्रत, संयमधारी।
लखन एक सौ आठ विराजैं, निरखत नयन कमल दल लाजें।।1।।

पंचम चक्रवर्ती पदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिननायक, नमौं शांतिहित शांतिविधायक।।2।।

दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुंदुभि आसन वाणी सरसा।
छत्र चमर भामंडल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी।।3।।

शांति जिनेश शांति सुखदाई, जगत् पूज्य पूजौं सिरनाई।
परम शांति दीजे हम सबको, पढ़ें तिन्हें पुनि चार संघ को।।4।।

पूजें जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके, इंद्रादिदेव अरुँ पूज्य पदाब्ज जाके।
सो शांतिनाथ वर वंश जगत् प्रदीप, मेरे लिए करहु शांति सदा अनूप।।5।।

संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीन को औ यतिनायकों को।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन! शांति को दे।।6।।

होवे सारी प्रजा को सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवे वर्षा समय पै, तिलभर न रहे व्याधियों का अंदेशा।

होवे चोरी न जारी, सुसमय वरषे हो न दुष्काल मारी।
सारे ही देश धारें, जिनवर वृष को जो सदा सौख्यकारी।।7।।

घाति कर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शांति करें सब जगत् में, वृषभादिक जिनराज।।8।।

शास्त्रों का हो, पठन सुखदा, लाभ सत्संगती का।
सद्वृत्तौं का, सुजस कहके, दोष ढाँकू सभी का।।9।।

बोलूँ प्यारे, वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ।
तौ लौ सेऊँ, चरण जिन के मोक्ष जौ लौ न पाऊँ।।10।।

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तबलौं लीन रहे प्रभु, जबलौं पाया न मुक्ति पद मैंने॥11॥

अक्षर पद मात्रा से, दूषित जो कुछ कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भवदुःख से॥12॥

हे जगबंधु जिनेश्वर! पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी॥13॥

विसर्जन पाठ (हिन्दी)

बिन जाने या जान के, रही टूट जो कोय।
तुम प्रसाद तैं परम गुरु, सो सब पूरन होय॥
पूजन विधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आह्वान।
और विसर्जन भी नहीं, क्षमा करो भगवान्॥
मंत्र हीन धन हीन हूँ, क्रिया हीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव॥
श्रद्धा से आराध्य पद, पूजे भक्ति प्रमाण।
पूजा विसर्जन मैं करूँ, सदा करो कल्याण॥
आए जो जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमाण।
ते अब जावहु कृपा कर, अपने अपने थान॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलि

(इसके पश्चात् खड़े होकर आरती करें)

आसिका लेने का पद

श्री जिनवर जी की आसिका, लीजे शीश चढ़ाए।
भव-भव के पातक कटें, दुःख दूर हो जाए॥

(स्तुति या भजन आदि बोलते हुए वेदी सहित प्रतिमाजी की तीन प्रदक्षिणा देकर धोक देनी चाहिए)

॥इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्॥

श्री ऋषिमण्डल स्तोत्र

हृदय कमल में अर्हत पद का स्थापन जो है करना,
कार्मन काठ जलावन कारण अग्नि ज्वाला है बनना।
निर्मल है वह निर्मल करता अर्हत पद का दाता,
बारम्बार नमूँ मैं उनको, पाऊँ अक्षय साता।
हृदय कमल की आठ पँखुड़ी उनमें क्रम से रखना,
अर्हंत, सिद्ध आचार्य उपाध्याय, साधु सर्व विचरना।
सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र उचरना,
ऐसे आठों पूज्यनीय को, चित में फिर फिर धरना।
ऊँ बीजाक्षर प्रथम उचारै, नमः पल्लव करिये,
ध्यान धरै इन आठों पद का, आनन्द उर में भरिये।
अरहंत पद का ध्यान किये से, सिर की रक्षा होवे,
सिद्ध समूह जपन करने से, मस्तक रक्षित होवे।
सूरि सुगुण मन में ध्याने से, नेत्र सुरक्षित होवे,
चौथे पद के गुण चिंतन से, घ्राण सुरक्षित होवे।
मुख की रक्षा करे साधुगण, दर्शन गर्दन रक्षै,
नाभि रक्षे सप्तम पद, जो सम्यग्ज्ञान सुदक्षै।
सम्यक्चारित्र सर्व अंग को, पाद पर्यन्त सुरक्षे,
ऐसे सकलीकरण करन से, होवे पूजक अक्षै।
ऋषि मण्डल यह पूजन भारी, इसको विधि से करिये,
विघ्नविनाश करें सुखदाता, श्री ब्रह्मचारी उचरियें।

सब द्वीपों के मध्य जम्बूद्वीप बसे,
उसकी है आठ दिशा पूरब आदि लसे।
अर्हंतादि पद आठ उनमें राजत हैं,
करिये उनका ध्यान पाप पलावत है।
मध्य सुदर्शन मेरु कंचनमय सोहे,
उपरि सिंहासन माहि अक्षर ह्रीं मोहे।
उनमें चौबीस जिनेश उनके गुण भारी,

अक्षय निर्मल शांत ताप जाड्य हारी।
निरहंकार निरीह सार, सार गुण सोहे,
सौम्य शुद्ध शुभ रूप तीन लोक मोहे।
तीन लोक के स्वामी यातें राजस है,
कर्म घातिया चूरे यातैं तामस है।
सदगुण से भरपूर सात्विक सोहत है,
ज्ञान तेज से सूर्य भ्रमतम खोवत है।
रूपगंध रस वर्ण इनसे दूर रहे,
तो भी है साकार समरस पूर रहे।
पर को दिया त्याग निज रस में पागे,
परमौदायिक देह आतम गुण जागे।
चूरे है सब कर्म तन को है छोड़ा,
निज रस पी संतुष्ट पर से मुँह मोड़ा।
करी कालिमा दूर आकांक्षा पूरी,
संशय रहा न लेश सब आशा पूरी।
ईश्वर ब्रह्मा बुद्ध ज्योति रूप खड़े,
शाश्वत सिद्ध स्वरूप सब में देव बड़े।
लोकालोक प्रकाश करते नाहि थके,
ऐसे श्री ह्रीं देव मेरे मन में धरे।
एक वर्ण दो वर्ण तीन वर्ण धारी,
चार पाँच हैं वर्ण सब के अधिकारी।
ऋषभादिक चौबीस तीर्थंकर सब ही,
ध्याओ उनको नित्य जैसे निम्न कही।
अर्ध चंद्र आकार ह्रीं का नाद कहा,
उसका वर्ण है श्वेत जैसे चन्द्र महा।
उसमें ध्याओ देव श्वेत वर्ण वाले,
चन्द्रप्रमु पुष्पदंत सब के रखवाले।
श्याम वर्ण की देह बिंदी की कीजै,
उसमें लिखिये नेमि मुनिसुव्रत कीजै।
मस्तक ऊपर भाग लाल वर्ण सोहे,

पद्मप्रभु वासुपूज्य अरुँण वर्ण मोहे।
शिर संलीन ईकार नीलम वर्ण कहा,
सुपार्श्व पार्श्व महाराज थापूँ पूज्य महा।
सोलह श्रीजिन देव कंचनमय देहा,
वे-ह-र मध्य लिखेय होवे सुखगेहा।
रागद्वेष मद मोह जीते इन सबने,
मायालीन में ये राजत हैं सब रे।
इनका सदा ध्यान किये जो ज्वाला निकले,
उनमें वेष्ठित देह मेरी जो उजले
तब नाही विषधर जाति मेरा निष्ट करे,
सेवक होकर वेग मेरे पाँव परे।
श्री ऋषिमण्डल मध्य ह्रीं का परिकर है,
उसमें रक्षित देह मेरी सुखकर है।
तब नाहिं नागिन जाति मेरा निष्ट करे,
सेवक होकर वेग मेरे पाँव परे।
सर्वऋद्धि के ईश अर्हत गणधर हैं,
उनके तेज से लोग वेग सब ही व्याप्त है।
उनका ध्यान किये परम सौख्य होगा,
विलय जायेंगे दु:ख मेरे अति वेगा।
पाताल, लौकिक देव, मध्य लोकवासी,
निर्जर ऊरघ लोक सब विमानवासी।
तुम सब ही जिन भक्त साधर्मी भाई,
करना मेरी सहाय सुनिये मनलाई।
मुनिवर है जगमाहिं अवधि श्रुतधारी,
विक्रिया चारण आदि सब ही ऋद्धिधारी।
मुझ पर कीजै कृपा तुम रक्षक सबके,
अतएव पूजूँ पायें विघ्न हरो जनके।

श्री मंशापूर्ण महावीर स्तुति

हे वीर प्रभो महावीर प्रभो, तेरे चरणों में आया हूँ।
सब पाप ताप संताप हरो, मैं अर्चन कर हर्षाया हूँ॥
आओ आओ प्रभु एक बार, मेरे मन का प्रक्षाल करों।
हे महाश्रमण हे वर्धमान, तुम सन्मति दे जंजाल हरों॥
प्रभु मंशापूरण करते हो, प्रभु संशय तिमिर भी हरते हों।
मैं मन से पूजा तेरी करूँ, सुख सिन्धु से भी भरते हों॥1॥
श्रद्धा का जल कर में लेकर, भक्ति का चन्दन लाया।
अक्षत कुसुम चरूवर पावन, दीप धूप वन्दन भाया॥
सिद्ध शिला फल चाह लिये प्रभु, आठों द्रव्य चढ़ाऊँगा।
श्री मंशापूरण महावीर की, पूजा कर सुख पाऊँगा॥2॥
महामना हे महामुनि हे, महायोगी महाज्ञानी हो।
महाशक्ति हे महाज्योति हे, महाप्रभु महादानी हो॥
महाव्रतों को महाभाव से, महावीर ने धार लिया।
मंशापूरण महावीर बन, मानव का उद्धार किया॥3॥
भावों की शुभ निर्मलता ही, भव बन्धन को नित काटें।
निज स्वभाव में रम जा चेतन, खोल राग की सब गाठें॥
भाव-साधना-भाव-समाधी, भाव स्वभाव मे लीन रहें।
द्रव्य भाव द्वय अर्घ्य समर्पित, श्रद्धालय में लीन रहें॥4॥
अन्तिम गर्भ हो चरमोत्तम तन, महावीर-सा बन जाऊँ।
महाअर्घ चरणाम्बुज देकर, वज्र कर्म सब विनशाऊँ॥
तीर्थंकर का गर्भाराधन, गर्भ दोष का नाश करे।
त्रय ज्ञानी समकित तीर्थंकर, धर्मात्मक उल्लास भरे॥5॥
जन्म काल का अतिशय सुखकर, तीर्थंकर ही पाते हैं।
कल्याणक शुभ जन्म मनाकर, नर देवा हर्षाते हैं॥
जन्म मरण की भ्रमण शृंखला, तब पूजा से घट जाये।
अर्घ समर्पित तव चरणों में, मोह तिमिर सब छट जाये॥6॥
वर्धमान अतिवीर वीर जिन, महावीर शुभ नाम कहो।
सद्बुद्धि सन्मार्ग प्रदाता, सन्मति का गुणगान अहो॥
राग-द्वेष मद लोभ मोह सब, नामोच्चारण दूर करें।
अर्घ समर्पित मंशापूरण, धर्मभाव भरपूर भरे॥7॥

दीर्घ साधना कर्म निर्जरा, धर्म ध्यान से नित साधें।
तन मन की इच्छा ज्वाला को, शुक्ल ध्यान जल से नाशें॥
महावीर की वीतरागता, निर्मल-निच्छल-मनहारी।
पूर्णअर्घ चरणों मे अर्पित, वर्धमान दीक्षाधारी॥8॥
केवलज्ञानी अतिशय धारी, चार घातियाँ नाश किया।
प्रातिहार्य आठों सज्जित है, समवशरण प्रवास किया॥
विपुलाचल वैभार गिरी या, पुण्यवान जग जीव जहाँ।
दर्शन पूजन व्रत उपदेशा, पाकर तिरते जीव यहाँ॥9॥

दोहा– अल्पज्ञान लब्ध्यक्षरा, पूरण केवल ज्ञान।
महावीर की देशना, करें आत्म कल्याण॥10॥

भू भीतर देवों द्वारा ही, पूजा सेवा नित होती।
वर्षों तक ना पुण्योदय था, दर्शन फिर कैसे होती॥
सात नवम्बर भू से प्रगटे, मंशापूरण श्री भगवान।
अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति गाऊँ, वर्धमान महावीर महान॥11॥
भक्ति में तन्मय हो करके, चिन्मय मुरत पाया है।
सिद्ध निरामय निर्मल निश्चल, अविनाशी सुख पाया है॥
हो विरक्त जग उलझन से प्रभु, तेरे दर पर आऊँगा।
आत्म ओज का उद्भव होवे, महावीर गुण गाऊँगा॥12॥
सुख राशि गुणदाता जिनवर, दया सिन्धू महावीर प्रभो।
विघ्न हरण हे मंशापूरण, वर्धमान अतिवीर विभो॥
परमेश्वर हो, प्रतिपालक हो, जिन शासन के नायक हो॥
महा-अर्घ्य चरणों मे अर्पित, सौरभ सागर ज्ञायक हो॥13॥

दोहा

महावीर जिनराज का, अद्भुत है दरबार।
भक्ति से पूजा करूँ, नमन करूँ शतबार॥14॥

धत्ता– जय जय महावीरा भवदधि तीरा, गुण गंभीरा अतिवीरा।
मम धर्म बढ़ावे जिनपद पावें, सौरभ सागर नत धीरा॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्र पंचकल्याणक संयुक्त शिवपद-कर्त्ता-भव-जल-निधी सर्वविघ्नव्याधिहर्ता तव भक्ति प्रसादात् सर्व जीव कल्याणमस्तु दीर्घायुरस्तु शुभमस्तु सुकीर्तिरस्तु धन-धान्य समृद्धिरस्तु आरोग्यमस्तु सर्व जीव रोग शोक पीड़ा विनाशनं भवतु सम्यग्दर्शन ज्ञान-चारित्र-वृद्धिरस्तु सर्व-ऋद्धि-सिद्धि-भवतु रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।

आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी की पूजा

स्थापना

सौरभ सागर गुरु को, नमन हो बारम्बार।
श्रद्धा पुष्प चढ़ा रहे, करना तुम उद्धार।।
हृदय कमल पर आ तिष्ठो, सौरभ सागर महाराज।
जिह्वा गुण गाती रहे, हो मुनिवर सरताज।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज अत्र अवतर-अवतर संवौष्ट आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

रगड़ रगड़ कर ये तन धोया, मन का मैल ना धो पाए।
इसीलिए तो गुरुवर क्षीरोदधि, से जल लेकर आए।।
निर्मल जल अर्पित करते हैं, जन्म जरामृत नष्ट करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

तरह तरह के लेप किए पर, तन संताप ना दूर हुआ।
जितना इसका शमन किया यह, उतना ही फिर और बढ़ा।।
मलयागिर चन्दन अर्पित तुमको, भव संताप को नष्ट करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में भवताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

संसार दुःखों से भरा हुआ, नहीं मिलता मुझे किनारा है।
मोह माया से जकड़ा जीवन, पर ना कोई सहारा है।।

उज्जवल अक्षत अर्पित तुमको, इनको तुम स्वीकार करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में अक्षय पद प्राप्ताये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

काम वेग से घिरे हुए हैं, कैसे बन्धन तोड़े हम।
तरह तरह के इत्र लगाए, इन्द्रीय दास बने हैं हम।।
कोमल पुष्प समर्पित तुमको, काम बाण को नष्ट करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

नाना मिष्ट पकवान डकारे, फिर भी क्षुधा ना शान्त हुई।
जिव्हा के वश होकर मैंने, भक्ष अभक्ष की सुधि खोई।।
सरस नैवेद्य अर्पित तुमको, क्षुधा रोग को ध्वस्त करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में क्षुधा रोग विनाशनाय-नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

अज्ञान तिमिर ने हमको घेरा, कैसे मंजिल पाएंगे।
तेरे ज्ञान की ज्योति पाकर, सहज पार हो जाएंगे।।
ज्ञान से ज्ञान की ज्योति जलती, दीपक तुम स्वीकार करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

अष्ट कर्म की दलदल में हम, हरदम फंसते जाते हैं।
पाप कर्म हम करते रहते, फल से नहीं घबराते हैं।।

धूप समर्पित तव चरणों में, अष्टकर्म का दहन करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

लौंग बादाम और किशमिश लेकर, तेरे द्वारे आए हैं।
मोक्ष के फल का स्वाद बता दो, इच्छा मन में लाए हैं।।
फल अर्पित है चरण तुम्हारे, मुक्ति रमा का वरण करूँ।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में मोक्ष फल प्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

जल चन्दन अक्षत पुष्प नैवेद्य, दीप धूप फल ले आए।
तब चरणों में अर्घ चढ़ा के, अष्टम वसुधा पा जाए।।
हम अर्घ समर्पित करते हैं, गुरुवर तुम स्वीकार करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में अनर्घ-पद-प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **भव भव से भटके फिरे, कोई ना तारनहार।**
सौरभ सागर गुरु मेरे, तुम ही करो उद्धार।।

जयमाला

लय (दे दी हमें आजादी....)

सौरभ सागर जी देव, गुरुदेव हमारे।
करते हैं भव से पार, गुरुदेव हमारे।।
माँ चन्द्रप्रभा कोख में, जब आप थे आए।
शुभ स्वप्न देख माता भी, फूली ना समाए।।

गज, सर्प, आग, सूर्य भी, देख लिया था।
अद्वितीय पुत्र जन्मेगा, ये जान लिया था।।1।।

जसपुर में गुरुदेव, तुमने, जन्म लिया था।
जसपुर की माटी को भी, तूने धन्य किया था।।
गुरू पुष्पदंत संघ, जसपुर में पधारे।
बालक सुरेन्द्र पुष्प संग, चल दिया प्यारे।।2।।

तपअग्नि में बारह वर्ष, गुरूदेव तपाया।
मैं भी बनूँ तब सम, गुरु ये मन में है भाया।।
आचार्य गुरुदेव ने, सौरभ बना दिया।
मुनिबाने से गुरुदेव ने, तुमको सजा दिया।।3।।

बाली उमर से सौरभ जी, अमृत पिला रहे।
आहत भी राहत पाके, आशीष पा रहे।।
संस्कार अलख देव, जन जन में जगाए।
संस्कार प्रणेता तभी, गुरुदेव कहलाए।।4।।

सृजन किया गुरुदेव ने, रचना कई लिखी।
सिद्धान्त शतक एक है, नायाब नव कृति।।
जिसने भी गुरुदेव का, साहित्य पढ़ा है।
जैनत्व बोध करके, उसका पाप कटा है।।5।।

बच्चों व शिक्षकों को, चमड़ा मुक्त किया है।
सौरभाँचल तीर्थ का, उपहार दिया है।।
हिसार की नसिया का, भी उद्धार है किया।
मनहर पारस क्षेत्र नाम, उसको दे दिया।।6।।

भू गर्भ में दबे थे, आदि पार्श्व अर वीरा।
अपने ज्ञान योग से, तुम जान लिया था।।
ज्ञान योगी देव गुरूदेव कहाए।
गुरूदेव के जयकार से गगन गुंजाए।।7।।

झज्जर के ग्राम झाडली में वीर थे प्रकटे।
ना देगे वीर मूर्त, ग्रामवासी अड़ गए।।
भक्ति की शक्ति से, महावीर बुलाए।
मंशा पूर्ण वीर, महावीर कहलाए।।8।।

पुष्पगिरी तीर्थ अप्रैल दश महा।
मेला लगा दृश्य अनुपम रहा महा।।
चारों दिशाएं गुंज उठी नमस्कार से।
आचार्य पद प्रतिष्ठा हुई जयजयकार से।।9।।

हम भी तो तेरे दर पे, अरदास लाए हैं।
दर्शन तिहारे मिलते रहे, प्यास लाए हैं।।
जीवन में मेरे 'आशा' की, तुम ज्योत जगा दो।
सुना है तेरा नाम, मेरी बिगड़ी बना दो।।10।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में अनर्घ पद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **सौरभ सागर गुरु का, करूँ हमेशा ध्यान।**
भक्त की हर श्वास में, सौरभ सागर नाम।।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

अर्घ - आचार्य श्री सौरभ सागरजी

पिच्छी लेकर नग्न रहे, और केश लोंच जो करते हैं।
तन शृंगार रहित वह होकर, बाईस परिषह सहते हैं।।
स्व आत्म कल्याण करे, और पर को मार्ग बताते हैं।
सुलझाते हैं जो मन की ग्रंथियाँ सौरभ सागर जी कहलाते हैं।।

ॐ ह्रूं संस्कार-प्रणेता-आचार्यश्री 108 सौरभ-सागर-जी गुरुदेव-चरण कमलेभ्यो अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संस्कार प्रणेता ज्ञानयोगी
आचार्य श्री 108 सौरभ सागर चालीसा

मनमंदिर में आन बसे, सौरभ सागर महाराज।
धर्म की राह दिखा दई, और सँवारे काज॥
ऐसे गुरु का यदि रहे, भक्त के सिर पर हाथ।
रोग शोक सब दूर रहे, सुख की हो बरसात॥

सौरभ सागर गुरु हमारे, भक्तों के सब कष्ट निवारे।
ये गुरुवर है अन्तर्यामी, मन की सारी बाते जानी॥
मनमोहक मुस्कान तुम्हारी, छवि तुम्हारी है मनहारी।
चन्द्रप्रभा जी की कोख में आए, शुभ लक्षण उनको दर्शाए॥
उगता हुआ इक सूरज देखा, सर्पो का एक जोड़ा देखा।
इक जंगल में आग भी देखी, हाथी की इक जोड़ी देखी॥
श्री पाल जी को स्वप्न बताए, फल जाना तो बहु हरषाए।
पुत्र रत्न इक घर आएगा, दावानल सा यश पाएगा॥
मस्त हस्ती सम भ्रमण करेगा, सूरज सम जग में चमकेगा।
बाबा की आँखों का तारा, सुरेन्द्र नाम लगता था प्यारा॥
गुरु पुष्प संघ जसपुर आया, इस बालक का भाग जगाया।
अद्भुत प्रतिभा देखी तुझमें, ज्ञानयोगी इक छिपा था तुझमें॥
पिता से तुमको मांग लिया था, मात पिता ने सहर्ष दिया था।
तप अग्नि में तुम्हें तपाया, बारह बरस का समय बिताया॥
क्षमावाणी का शुभ दिन आया, दीक्षा धारुँ ये था भाया।
21 सितम्बर दिन पुण्यशाली, होती गुरु की दीक्षा दिवाली॥
चहुँ दिशि अम्बर बने तुम्हारे, वीतरागी मुद्रा जब धारे।
वाणी तेरी शीतल चन्दन, शीघ्र मिटाती मन का क्रन्दन॥
जिस नगरी भी कदम बढ़ाए, अतिशय अपने खूब दिखाए।
धर्म की ऐसी अलख जगाई, 'संस्कार प्रणेता' उपमा पाई॥
जेल में जो उपदेश सुनाए, मद्य माँस से लोग छुड़ाए।
जब बच्चे उपदेश हैं सुनते, शहद ब्रैड व चमड़ा तजते॥
जिस नगरी भी किया चौमासा, भक्तों के मन भर दी आशा।
निर्बल तुझसे बल पा जाए, वीराने हरियाली पाए॥

जंगल में मंगल करते हो, संकट सारे तुम हरते हो।
जिस पर होती कृपा तुम्हारी, उसकी तो किस्मत है सँवारी॥
एक प्रेरणा तुमसे पाई सौरभाँचल की नींव धराई।
सौरभाँचल एक तीरथ प्यारा, नव जिनग्रह का देख नजारा॥
वृहद आदि पद्मासन प्रतिमा, नीलाम्बर का लगा चँदोवा।
श्रुत स्कन्ध मंदिर बनवाया, द्वादशांग का मान बढ़ाया॥
रत्न चौबीसी मन को भाए, देख देख के हिय हरषाए।
सूनी थी हिसार की नशिया, पर भू भीतर दबी थी निधिया॥
अपने ज्ञान ध्यान से जाना, त्रय जिनदेवा भीतर जाना।
हाथों से मिट्टी खुदवाई 'पार्श्व' 'आदि' 'वीरा' छवि पाई॥
जयकारों से गगन गुँजाए, ज्ञानयोगी गुरुदेव कहाए।
'मनहर पारस क्षेत्र' कहाया, सहस्त्र कलश से न्हवन कराया॥
मंशापूर्ण श्री महावीरा, सेवा भाव जगावे धीरा।
जीवन आशा नाम पुकारा, विकलांगों का बने सहारा॥
ज्ञानी मन चिंतन करता है, हर पल काव्य ग्रन्थ लिखता है।
धर्म गगन में करे विहारा, "सिद्धांत शतक" आगम है प्यारा॥
सब शूलों की सेज उठाते, जैनत्वो का बोध कराते।
पापों के दहकते अंगारे, प्रेरक प्रवचन बुझाते सारे॥
फैशन एक अभिशाप बताया, गर्भपात से सबको बचाया।
जैन विधान सदा करवाते, भक्तों के शुभ भाव जगाते॥
ख्याति लाभ की नहीं कामना, पूजा की भी नहीं चाहना।
विज्ञापन से दूर ही रहते, चर्या सावचेत हो करते॥
आगम के रत्नाकर गुरुवर, शान्त सौम्य छवि सुन्दर गुरुवर।
आशीर्वाद गुरु का फलता, जीवन सहज सरल हो चलता॥
तीर्थराज सम्मेद शिखर है, श्री सौरभांचल का परिसर है।
सहस्र वर्ष प्राचीन है प्रतिमा, अतिशयकारी पारस महिमा॥
10 अप्रैल का शुभ दिन आया, पुष्यगिरी में उत्सव छाया।
रवि पुष्य नक्षत्र कहाया, पुष्पदन्त ने सूरी बनाया॥
देश विदेश से यात्री आये, दृश्य देखकर अति हर्षाये।
सौरभ गुरु को शीश नवाया, धन्य धन्य सौभाग्य जगाया॥

जिस धरती पर कदम बढ़ाए, वो माटी चन्दन बन जाए।
घर घर ज्ञान के दीप जलाए, अज्ञान तिमिर मन का हट जाए।।
दर्शन पा मन पुष्प खिला है, वर्द्धमान का दर्श मिला है।
जब से तेरा साथ मिला है, 'हम-सब' को भगवान मिला है।।

दोहा– सौरभ सागर चालीसा, मन से जो भी ध्याय।
त्याग धर्म बढ़ता रहे, गुरु अनुकंपा पाए।।
गुरुवर तेरे चरण में, नमन हो बारम्बार
पापों का क्षय हो मेरा, भव से हो जाऊँ पार

(9 बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

जाप्य मंत्र- ॐ ह्रूं सौरभ सागर गुरुवे नमः।

आरती आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी की

(लय - तन डोले, मन डोले ...)

सौरभ सागर की, गुण आगर की
शुभ कंचन दीप सजाय के, आज उतारूँ आरतिया
माता चन्द्रप्रभा जी के जाये, श्रीपाल जी के सुत कहलाये
पुष्पदंत जी की बगिया से, ये कोमल पुष्प है आये
सुगन्धित कोमल पुष्प है आये
गुरु की सुरभि से सुरभित होकर कंचन दीप सजाय के ...
गुरु की छवि है इतनी निराली मन को बहुत लुभाती
महिमा गुरुवर के वचनों की जन-जन को हर्षाती
जय गुरुवर जन-जन को हर्षाती
इनके चरणन शत् शत् वन्दन शुभ कंचन दीप सजाय के...
जो भी इनकी शरण में आए, सब संकट कट जाये
हम भी भटके हैं जन्मों से हमको भी पार लगाये
हो जय गुरूवर, हमें भी पार लगाये
यह विनती करें तोसें अरज करें शुभ कंचन दीप ...

कुछ विशेष जाप

1. ॐ ह्रीं नमो अर्हते रक्ष रक्ष ह्रूँ फट् स्वाहा।
2. ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं असिआउसा अप्रतिहत-शक्ति भवतु ह्रीं नमः।
3. ॐ श्रीं ह्रीं अर्हं श्री नमः।
4. ॐ ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय सर्वसौख्यं कुरु कुरु नमः।
5. ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं असिआउसा अनाहत-विद्यायै णमो अरिहंताणं मम सर्व विघ्न शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।
6. ॐ ह्रीं श्रीं वद् वद् वाग्वादिनी ह्रीं नमः।
7. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्टबुद्धिणं।
8. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयं बुद्धाणं।
9. ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं श्रीं क्लीं ब्लूं क्रौं ॐ ह्रीं नमः।
10. ॐ ह्रीं ऐं क्लीं ह्रौं नमः।
11. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वो सहिपत्ताणं झ्रों झ्रों नमः।
12. ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं ऐं अर्हं मम इष्ट कार्य सिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।
13. ॐ ह्रीं श्रीं मंशापूर्ण महावीराय नमः रक्ष-रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा।
14. ॐ ह्रीं णमो भगवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जूए वा विवादे वा रणंगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा वर्धमान-मन्त्रेण सर्वरक्षा भवतु स्वाहा।

जीवन परिचय

आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज

जन्म	: कार्तिक कृष्णपक्ष अष्टमी (गुरुवार)
	22 अक्टूबर, 1970 जसपुरनगर (छत्तीसगढ़)
बचपन का नाम	: सुरेन्द्र कुमार
पिता का नाम	: श्री श्रीपाल जैन
माता का नाम	: श्रीमती चन्द्रप्रभा जैन
गृहत्याग	: शुक्रवार, 08 अप्रैल, 1983
क्षुल्लक दीक्षा	: शुक्रवार, 17 जनवरी, 1986 छत्तरपुर (म.प्र.)
ऐलक दीक्षा	: सोमवार, 27 जून, 1988 अंदेश्वर पार्श्वनाथ (राज.)
मुनि दीक्षा	: 21 सितम्बर, 1994 इटावा (उत्तर प्रदेश)
दीक्षा गुरु	: पुष्पगिरि प्रणेता गणाचार्य श्री पुष्पदंतसागरजी महाराज
आचार्य पद	: 10 अप्रैल, 2022 (पुष्पगिरि)
राजकीय अतिथि	: झारखंड, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखंड

:: विशेष कृति ::

1. सिद्धान्त शतक
2. जैनत्व का बोध
3. धर्म गगन में करें विहार
4. प्रेरक प्रवचन
5. फैशन एक अभिशाप
6. शूलों की सेज
7. दहकते अँगारे
8. आओ लौट चलें
9. पत्थर की मानवाकृति
10. प्रतिमा से प्रतिभा जगे
11. सृजन के द्वार पर
12. हे इन्सान! मत बन तू शैतान
13. जैन शिक्षा भाग-1, 2, 3, 4
14. आराध्य आराधना
15. मंगलं पुष्पदन्ताद्यो
16. जैनाचार संहिता
17. श्रावकाचार संहिता
18. श्रमणाचार संहिता
19. भक्ति-सौरभ
20. अर्हत् चरण सपर्या (जिन-देवार्चना)

विधान

21. श्री भक्तामर स्तोत्र
22. श्री कल्याण मन्दिर
23. स्वयंभू चौबीसी
24. श्री मंशापूर्ण महावीर
25. चौंसठ ऋद्धि सिद्धि
26. आचार्य पुष्पदन्तसागर
27. श्री सम्मेदशिखर
28. माँ जिनवाणी
29. कर्मदहन
30. श्री नवग्रह जिनदेव
31. श्री पुष्पगिरी तीर्थ
32. जैन विधान संग्रह

सौरभांचल प्रकाशन

साहित्य प्रकाशन में ऑन लाईन सहयोग करने के लिए

Scan & Pay

UPI ID : 8448677688@ibl

A/c No. : 45922900000921
A/c Name : SAURBHANCHAL PRAKASHAN
Bank : DCB BANK LIMITED
IFSC Code : DCBL0000459

8448677688

कृपया इस नम्बर पर (व्हाटसअप)
जमा राशि का स्क्रीन शाट भेजकर रसीद प्राप्त करें।

विधान पुस्तक प्राप्ति स्थल

सौरभांचल प्रकाशन

गणधर गारमेन्टस
IX/842, प्रेम गली नं. 3-सी,
मुलतानी मौहल्ला, सुभाष रोड,
गांधी नगर, दिल्ली-110031

मनोज कुमार जैन
E-17/9, कृष्णा नगर,
दिल्ली-110051
मो. : 9810056286

1200 वर्ष प्राचीन भूगर्भ से प्रगटित
श्री 1008 मंशापूर्ण महावीर स्वामी जी
गंगनहर, मुरादनगर, गाजियाबाद

श्री 1008 आदिनाथ भगवान ''सौरभाँचल''
गन्नौर (हरियाणा)

श्री 1008 पद्मप्रभु भगवान पुष्पगिरी

संस्कार प्रणेता ज्ञानयोगी
जीवन आशा हॉस्पिटल प्रणेता स्रोत
आचार्य श्री 108 सौरभसागर जी महाराज